

अबुलफ़ज़्ल की भूमिका ।

परमात्मन् ।

हे रहस्य मय ! माया पट में छिपे तुम्हारे भेद अनन्त,
कैसा था आरम्भ तुम्हारा नहीं जानता है यह अन्त ।
आदि अन्त भगवन् ! दोनों हैं इस प्रकार से तुम में लीन,
अविनाशी साम्राज्य तुम्हारा दोनों उसमें चिह्न विहीन ।

वाणी मेरी मूक हुई है, और हुई जिन्हा पापाण,
कानन है विस्तीर्ण, पंगु मैं, पा न सका उसका परिमाण ।
चिन्ता शक्ति चकित है मेरी यही आपका है गुणगान,
आपें में मैं नहीं नाथ हूँ यही आपकी है पहचान ।

१—आईने - अकवरी में “श्राव्याहो-
अकवर” पाठ है. जिसका शाढिक अर्थ
“ईश्वर महान है” या “महान - ईश्वर”
होता है । भाषान्तर में इसी का भावार्थ
चोकर संबोधनात्मक “परमात्मन्” शब्द
प्रयोग किया गया है ।

२—फ़ारसी की मौलिक रचना इस
प्रकार है :—

ऐ ! हमा दरपदा निहां राजे - तो ;
बेखबर श्रंजाम ज़ि आगाज़े - तो ।

दर तो हम आगाज़ो हम श्रंजाम गुम ;
हर दो बशहरे - किदमत नाम गुम ।
पाय - सखुन लंगो ज़बाँ संगलाएँ ;
बले - क़दम तंगो बियाबाँ क़राएँ ।
हरते - अन्देशा सिपासे - तो बस ;
बे खुदेयम रुण शनासे - तो बस ।

३—“पा न सका उसका परिमाण”
यह चरणांश मूल रचना में नहीं है ।
अशक्यता के स्पष्टीकरण एवं “कानन है
विस्तीर्ण, पंगु मैं” चरण की पूर्ति के लिए
जोड़ दिया गया है ।

उस ईश्वर को पहचाननेम्योग्य वह मनुष्य है, जो मौखिक बन्दना को छोड़कर व्यावहारिक रूप से उसके गुणगान में दत्तचित्त हो, और सृष्टिकर्ता के कुछ अद्भुत चरित्र लिखकर अक्षय सौभाग्य प्राप्त करे, साथही लिखते समय अपनी मनोवृत्ति को लेखनी के छेद से मिलाये रखते^१। आशा है कि ऐसा करने से, उसके राजत्व का तंज लेखक पर आभासित हो और इस प्रदीप ज्ञान द्वारा उसके सागर के कुछ बूँद तथा गहन बन की धूल का कोई परमाणु ग्रहण करके वह चिरस्थायी आनन्द प्राप्त करं और वाणी एवं कर्म के खण्डहर को समृद्धशाली बनावे ।

मुवारक-सुत अबुलफज्जल के ध्यान में—जो कि ईश्वर का धन्यवाद, राज-स्तुति की भाँति गान करता है और नृपोचित मणियों को वर्णन के सूत्र में पिरोता है—यह बात नहीं है कि वह उस विचित्र संसार को नया रंग देने वाले तथा मणिमय सृष्टि को भूषित करने वाले (अकबर) के यशस्वी कार्यों तथा श्रेष्ठ गुरुओं को प्रकट करे । यह बुद्धिमानी भी नहीं है कि वह प्रत्यक्ष बातों को प्रदर्शित करे और निज को ज्ञानवानों का उपहास्यास्पद बनावे । वह (अबुलफज्जल) केवल अपने ज्ञान-मणि को संसार-हाट में उपस्थित करता है और इस कार्य को हाथ में लेने पर अपने हृदय को आत्म-प्रशंसा में तत्पर करता है । ऐसे गुम्तर कार्य को—जिसको स्वर्गस्थ भी कठिनता से पूरा कर सकते हैं—करने का माहस करना अपनी प्रशंसा करना नहीं, वरन् अशक्यता और संकल्प की तुच्छता का प्रकट करना है । इस ग्रंथ की रचना में लेखक का अभीष्ट यह है कि वह इस शुभ समय के अन्वेषकों के हृदय में, ज्ञान-क्षेत्र के सजग विचरणकर्ता एवं सांसारिक और ईश्वरीय रहस्यों के ज्ञाता (सम्राट्) की बुद्धि की महत्ता, साहस-विशालता तथा कर्मों की श्रेष्ठता स्थिर करे और संसार की भावी संतति के लिए एक श्रेष्ठ उपहार प्रस्तुत करे । साथ ही जीवन, कृतज्ञता प्रकाशन से भूषित हो जाय और परलोक यात्रा का संबल प्रस्तुत हो जाय । आशा है कि इस जिज्ञासा के तृप्ति बन (संसार) में—जिसमें प्रकृतियाँ नाना प्रकार की, वासनाएँ अगणित, न्याय तुर्लभ और पथप्रदर्शक दुष्प्राप्य हैं—लोग इस ज्ञान-विधान द्वारा कर्तव्य कर्म जान लेंगे और ज्ञान तथा कर्म के असीम अस्तव्यस्त कानन में भटकने से मुक्ति पा जायेंगे । इसी उद्देश्य से सम्राट् के कुछ आईन लिखता हूँ और दूर तथा निकट वर्तियों के लिए नीति-शास्त्र उपस्थित करता हूँ । यतः पूर्णतया विचार यह

^१ अर्थात् जो बात अन्तःकरण में हो, वही लिखें ।

है कि सम्राट की व्यवस्थाएं लिखूँ इस लिए अनिवार्यतः उसके उच्च पद की महिमा वर्णन करनी पड़ेगी और इस श्रेष्ठ पद के सहायकों का हाल चिन्तित करना पड़ेगा।

अद्वैत न्यायकारी (ईश्वर) को हृषि में पादशाही से उत्कृष्ट पद और कोई नहीं है ; और सभी कार्य कुशल उसके ऐश्वर्य के स्रोते से तृप्त होते हैं । राजत्व का, जन समूह की राजद्रोहिता का उपचार होना एवं जनता को शासन में रखना ही, उसकी (बादशाही की) आवश्यकता के सम्बन्ध में प्रमाण चाहने वालों के लिए सबूत है । शब्द ‘पादशाह’ का अर्थ भी इसी कथन का समर्थक है ; क्योंकि ‘पाद’ के अर्थ स्थायित्व और अधिकार के हैं, तथा ‘शाह’ असल और स्वामी को कहते हैं । अतएव पादशाह स्थायित्व और अधिकार का मूल स्वामी है । यदि शासन का आतंक न हो तो कलह का उपद्रव कैसे दृष्टे और अपना बनाव चुनाव कैसे हो, मनुष्य जाति लोभ और क्रोध के बोझ से विनाश-कुण्ड में गिर जाय ; समस्त मंसार शोभा रहित हो जाय, और थोड़े ही समय में समृद्ध जगत उजाड़ हो जाय । राजा के न्याय के प्रकाश से अनेक जन-समूह प्रकुप्ल बदन तथा हर्षपूर्वक आज्ञा पालन का मार्ग प्रदण करलें हैं, और बहुत लोग उसके दंड के भय से अपने अत्याचारों के हाथ खींच कर विवश होकर मन्त्रथ पर चलते हैं । ‘शाह’ उसे भी कहते हैं जो अपने समकक्ष पदस्थों में श्रेष्ठ हो, जैसे ‘शाह सवार’^१, और ‘शाह गाह’ । लोग दामाद के लिए भी शाह शब्द प्रयुक्त करते हैं । संसार रूपी पन्नी सम्राट् से वैवाहिक सम्बन्ध जोड़ती है और यह मनमोहनी उसकी दासी होती है ।

सरल चित्त और अदूरदर्शी मनुष्य, सच्चे राजा को स्वार्थी शासक से पृथक नहीं कर सकते । वे करें भी कैसे, क्योंकि परिपूर्ण कोप, सेना की अधिकता, योग्य सेवक, आज्ञाकारी प्रजा, बुद्धिमानों की विपुलता, गुणियों का बाहुल्य और सुख सामग्री की प्रचुरता दोनों के पास होती है । परन्तु सूक्ष्मदर्शी सन्यनिरीक्षकों पर उनका भेद प्रकट होता है । उपरोक्त वस्तुएं पहले शासक के पास स्थायी रूप से रहती हैं और दूसरे के पास से शीघ्र नष्ट हो जाती हैं । सच्चा राजा अपने चित्त को उस सामग्री के बन्धन में नहीं फँसने देता है ; उसका पूर्ण उद्देश्य अत्याचार के लक्षण-उन्मूलन करना तथा मनुष्य की योग्यताओं^२ को काम में

१ सवारों में प्रधान सवार ; मार्गों में करता है कि जिनके द्वारा मनुष्य का मानसिक विकाश हो और उसकी योग्यता

२ अर्थात् वह ऐसे साधन उपस्थिति प्रकट हो सके ।

लाना होता है। शौकि, सुख, पवित्रता, न्याय, शील, वचन-निर्वाह, (वक्ता) सत्यता और निष्कपटता का आधिक्य, इत्यादि उसके परिणाम होते हैं। पिछला (स्वार्थी शासक) दिखावटी काम करने, अपने बनाव चुनाव, जनता को दास बनाये रखने और भोग विलास में संलग्न रहता है; परिणाम स्वरूप (उसके राज्य में) भय, अशांति, उपद्रव, अत्याचार, विश्वासघात और चोरी का बाज़ार गर्म होता है।

राजत्व, अनुपम न्यायकारी ईश्वर का प्रकाश, विश्वभास्कर सूर्य^१ का आलोक, सिद्ध-शास्त्रों की सूची और सर्व गुणों की खानि है। प्रचलित भाषा में इस प्रकाश को फर-इ-एज़दी (ईश्वरीय तेज) कहते हैं, और पुगने लांगों की बोल चाल में कियान खोरा (अत्युक्तष्ट दीप मंडल)। मनुष्य बिना किसी विचारानी के कहे सुने बादशाह की सहायता करने में अपना हाथ लगा देने हैं और सब लोग उसके दर्शन करते ही अपनी बन्दना का मस्तक उसकी सेवा-भूमि पर झुका देते हैं। इसके अतिरिक्त उससे अनेक श्रेष्ठ गुण प्रकट होते हैं। १—मानव पितृत्व—भाँति भाँति के मनुष्य उसकी कृपा से सुख पाते हैं: सम्प्रदायों के विरोधी होने पर भी द्वेष की धूल नहीं उठती। श्रेष्ठबुद्धि शासक समय का हृदय पहचानता है और उसके अनुकूल आचरण करता है। २—हृदय विशालता बुरी बातें देवकर वह भड़क नहीं उठता, और अज्ञान का उपद्रव उसके चिन्त को फांस नहीं लेता। शूरता उसके पैर जमा देती है। ईश्वर प्रदत्त धीरता से, उसकी अपगाधी को ढंड देने की शक्ति, प्रौढ़ हो जाती है, और दोषी की भीपणता उसे उसकी पूर्ति (ढंड देने) से नहीं रोकती। उसकी उदारता से छांटे बड़े अपना मनोरथ सिद्ध करते हैं और किसी की अभिलापा प्रतीक्षा की तंग गली में पड़ी नहीं रहती। ३—दिन दिन ईश्वर विश्वास वृद्धि—प्रत्येक काम करने में, वास्तविक कार्यकर्ता ईश्वर को जानता है और इसी से कारणों के विस्त्र होने पर भी व्यग्र नहीं होता। ४—ईश्वरोपासना—कार्य की सफलता से असावधान नहीं होता और असफलता उसे भिजा वृत्ति के लिए व्यग्र नहीं करती। इच्छा की बाग डोर का सिरा बुद्धि के हाथ में रखता है और वासनाओं की चौड़ी सड़क पर उतावली से नहीं दौड़ता तथा अनावश्यक पदार्थों के उद्योग में अपना मूल्यवान समय नष्ट नहीं

१ अकबर सूर्य को ईश्वर का दृश्यमान प्रतिनिधि मानता था और इसी लिए

उसकी उपासना करता था।

करता । वह, निरंकुश अन्ध-क्रोध को ज्ञान के अधीन रखता है और अन्ध-कोप को बलात् नहीं उठने देता तथा हल्केपन को अटकल से बाहर नहीं होने देता । वह मेल के शिखर पर विराजमान होता है । कुटिलों को सुमार्ग पर वापस लाने का साधन बनता है तथा उनकी निर्लज्जता का पट फटने नहीं देता है (अर्थात् उनके कुकर्म जनता के सम्मुख नहीं आने देता) । न्याय करने में वह अपने को ऐसा जाहिर करता है कि मानों वह स्वयम् तो प्रार्थी है और वादी ही, न्यायकारी है । इच्छुकों को प्रतीक्षा के पथ पर नहीं बिठलाता । सृष्टिकर्ता के आज्ञापालन में सृष्टि की समृद्धि चाहता है । लोगों को प्रसन्न करने के लिए बुद्धि के विरुद्ध आचरण नहीं करता । वह सदा सत्यवादियों की टोह में रहता है, और उनके कड़ुबे मालूम होने वाले वचनों से, जिनका फल मीठा हो, असनुष्टु नहीं होता । वक्ता की श्रेणी और उसकी सूक्ष्म कोटियों पर ध्यान रखता है । इसी पर सन्तोष नहीं करता कि स्वयं अत्याचार न करे, वरन् वह चाहता है कि उसके गज्य भर में कहीं अन्याय न हो ।

वह सदा संसार-शरीर की स्वास्थ्य रक्षा का ध्यान रखता है और उसके नाना प्रकार के रोगों का उपचार करता है । जैसे तत्वों के सम्मिश्रण से प्राणियों का प्राकृतिक-सामंजस्य उत्पन्न होता है, उसी प्रकार वर्गों की तुल्यता से मनुष्यों के हृदयों में अनुकूलता उत्पन्न हो जाती है; और एक मनोवृत्ति तथा एक पक्षता के प्रकाश से बहुत से लोग एक देह हो जाते हैं ।

संसार के मनुष्य चार वर्गों से अधिक नहीं होते :—१—योद्धा—ये संसार शरीर में अग्नि के तुल्य होते हैं । इस समूह की सकोप बुद्धि-ज्ञाता से दुर्भागी उपद्रवियों की पड़यंत्र रचना का कूड़ा-करकट भस्म हो जाता है; और उपाधिमय जगत में सुख का दीपक जलता है । २—शिल्पकार तथा व्यापारी—ये वायु के स्थान पर हैं । इस समुदाय की कार्य परायणता तथा पृथ्वी पर्यटन सं सार्वभौमिक ईश्वरीय प्रसाद उपलब्ध होता है और आनन्ददायिनी वायु जीवन के गुलाब-नृक्ष को बढ़ाती है । ३—विद्रान—जैसे दार्शनिक, वैद्य, गणितज्ञ, रेखागणित-विशारद और ज्योतिषी, ये जल के समान हैं । इस सचेत वृन्द की लेखनी और बुद्धि-सरिता से, संसार के दुर्भिक्ष काल में जल उमड़ आता है और सृष्टि-उच्चान को उसकी सिंचाई से विशेष शीतलता प्राप्त होती है ।

१—यह विवरण “शाहनामा”,	और “अखलाके-नासिरी” में भी
“अखलाके-मोहसनी”, “अखलाके-जलाली”	विद्यमान है ।

४- कृपक और अमजीवी—यह वर्ग पृथ्वी के सदृश है। इन्हीं के उद्योग से जीवन की सामग्री पूरी होती है और इन्हीं के परिश्रम करने से बल और सुख प्राप्त होते हैं। अतएव शासक के लिए आवश्यक है कि वह इनमें से प्रत्येक को उपयुक्त स्थान पर लगाकर संसार को समृद्धशाली बनाने में दक्ष-चित्त हो और प्रत्येक का उसकी कार्यपटुता के अनुसार सम्मान करे। इसका परिणाम यह होगा कि संसार की आपदाएँ नष्ट हो जायगी और सृष्टि का संयोग समता पर हो जायगा।

जैसे लोक शरीर मनुष्यों के चार वर्गों से समता—सौन्दर्य प्राप्त करता है, उसी प्रकार राज्य की पवित्र मूर्ति भी चार प्रकार के श्रेणी में द्वारा, सुप्रबन्ध का उद्देश्य अपने मुख्यमण्डल पर मलती है :—

१. राज्य के श्रीमन्त—जो अपने सामर्थ्य पर विश्वास करके प्रत्येक कार्य उत्तमता से संचालित करते हैं। रणस्थल को उत्सर्ग के सुकीर्ति-प्रदीपमण्डल से प्रकाशित करके प्राणहृति देने से नहीं हिचकते। आतङ्क-पूर्ण राजसभाके ये भाग्यवान पुरुष अग्नि के स्थान पर हैं, हृदय-प्रकाशक भी और शत्रु-दाहक भी। इस वर्ग का अध्यक्ष वकील है, जो अपनी वृद्धि की प्रवरता से सदूर्भक्ति^१ के चार पदों पर पहुँच कर मुल्की और माली नायव होता है। पवित्र मन्त्रणा-सभाएँ उसके ज्ञान के प्रकाश से प्रदीप होती हैं और राज्य के महान कार्य उसी की सूचम दृष्टि से दुर्लभता पाते हैं। पद-वृद्धि, पदन्युत्ति, नियुक्ति और पृथक्ता उसके मतानुसार होते हैं। उसे ज्ञानवान, चिन्नाशील, उच्च-साहसी, पीठ पीछे भलाई कहने वाला, धीर, उदाराशय, मिलनसार, प्रफुल्लवदन, अपने और पराये के साथ एकसी वृत्ति रखने वाला, मित्र और शत्रु से सम व्यवहार करने वाला, तुली वात कहने वाला, समस्याएँ सुलभाने वाला, सत्यवादी, प्रतिष्ठित, गंभीर, सम्मति लिए जाने योग्य, विश्वासपात्र, चतुर, दूरदर्शी, राज-काज विज्ञ, राज-रहस्य-ज्ञाता, काम न रोक रखने वाला, कार्य की अधिकता से न ऊबने वाला होना चाहिये। दूसरों के मनोरथ पूरे करने में एहसान अपने ऊपर रखें, और लोगों के पद-ज्ञान का ध्यान रख कर कार्य संचालन करें। सब से दिल मिलाने को प्रिय समझ कर अपने से छोटों का

१ अकबर कहा करता था कि पूर्ण सञ्जक्षि (इस्लाम) निम्नलिखित चार चीजों के त्याग पर निर्भर है—ज्ञान, माल, दीन और वैयक्तिकमान। जो अकबर को आध्यात्मिक बातों का भी पथ प्रदर्शक मानते थे, उनको उक्त सञ्जक्षि प्रकट करने का बचन देना पड़ता था। उसके बाद वे दीन इस्लामी में सम्मिलित किये जाते थे।

सम्मान करे। अनुपयुक्त बातें न करे और कुकर्मों से अपने को बचाये। यद्यपि वह दफ्तर का स्वामी नहीं होता तथापि दफ्तरों के अध्यक्ष उससे सम्पर्क रखते हैं, और वह दूरदर्शिता से आवश्यक बातों की सूची अपने पास रख लेता है। मीरमाल^१, मोहरदार^२, मीरबखशी^३, बारबेगी^४, क्रोरबेगी^५, मीरतुज़कर्क^६, मीर बहू^७, मीर बर्द^८, मीर मंज़िल^९, ख़वान सालार^{१०}, मुंशी^{११}, क्रोशबेगी^{१२}, अख्ता बेगी^{१३}, इस वृन्द में सम्मिलित हैं। इनमें से हर एक को चाहिये कि दूसरे का काम जाने।

२ विजय के सहायक—धनादि संचय कर्ता तथा आय-व्यय विभाग के रक्षक—शासन-शरीर में वायु के सहशा हैं, चित्त पोषक मन्द वायु भी और प्राण-घातक लक्ष भी। इस वर्ग का प्रधान बज़ीर होता है, इसे दीवान भी कहते हैं। वह सम्राट् का माली नायब होता है। राजकोपों की रक्षा करना और द्विमात्र-किताब का प्रवन्ध रखना उसके कार्य हैं। लोग उसको राजकर के धन का सरक और उज़बंड हुये संसार का आवाद करने वाला समझते हैं। उसे ईश-सेवक^{१४}, उत्तम गणितज्ञ, निर्लोभी, सावधान, परम मित्र, संयमी, कार्य-माधक, कुशल निवंधकार, स्पष्ट लेखक, सत्यवादी, सत्यशील, शिष्ट एवं परिश्रमी होना चाहिये। वह आय-व्यय विभाग का प्रधान अधिकारी है। मुस्तौकी (नायब दीवान) के कार्य में जो कठिनाई उपस्थित होती है, उसकी दूरदर्शिता में दूर

१ सम्भवतः सम्राट् के जेव खर्च का हिसाब रखने वाला अधिकारी (ब्लाकमैन) परन्तु नवलकिशोर की मूल एस्टेट में ‘दारोगाय खजायन’ अर्थात् कोर्पों का अध्यक्ष अर्थ है।

२ शाही मोहर रखने वाला।

३ वेतन-ध्यक्ष।

४ जो दरवार में लोगों को सम्राट् के सम्मुख उपस्थित करे और उनकी अर्जियाँ सुनावे इसे मीर अर्ज़ भी कहते हैं।

५ शाही अख्त-शरूओं और निशानों का प्रधान अधिकारी।

६ समस्त रीति रिवाजों और पर्वादि का

अध्यक्ष। (ब्लाकमैन) शाही उत्सवों, दरवारों तथा लश्करों का प्रबंधक पूर्व सरदार (न० कि०)।

७ बंदरगाहों का अध्यक्ष।

८ शाही जंगलों का अध्यक्ष।

९ दरवार अथवा शयनागार का प्रधान प्रबन्धक।

१० भोजनालयाध्यक्ष।

११ बादशाह का मोहरिं।

१२ शिकार म्वाने का दारोगा।

१३ अस्तवलों का प्रधान अधिकारी।

१४ दीन इलाही का सदस्य (ब्लाकमैन) मूल में “इलाहीबन्दा” पाठ है।

हो जाती है; और जो समस्या उससे भी नहीं सुलझती वह वकील के सामने हल होजाती है। मुस्तौफ़ी^१, साहबे-तौजीह^२, अवारजा-नवीस^३, भीर सामान^४, नाज़िरे-छूतात^५, दीवाने-छूतात^६, मुशरिफ़े-गंजूर^७, बाक्या-नवीस^८, आमिले-खालसा^९ उसके अधीन हैं। ये सब अधिकारी वजीर के बुद्धिबलानुसार कार्य करते हैं। कुछ शासक वजारत को वकालत का एक अंग मानते हैं और राज्य मंदिर के इन दो स्तम्भों के कार्यों को ऐसे एक ही व्यक्ति से कराते हैं, जो दोनों विभागों के श्रेष्ठ कार्यों को जानता हो। कभी वकील के दुष्प्राप्य होने पर, एक ऐसे व्यक्ति को, जिसमें उसके (वकील के) गुण पाये जायें, मुशरिफ़े-दीवान बनाते हैं। उसका पद दीवान से ऊँचा और वकील से नीचा होता है।

३ संगी साथी—जो अपने ज्ञान के प्रकाश, तीव्र-हृषि की आभा, काल-ज्ञान के सामर्थ्य, मानवीय प्रकृति की भीतरी परख की अधिकता, निष्कपटत्व और ओजस्वी भाषण से राज सभा को भूमित करते हैं; और अपने धार्मिक विश्वास तथा शुभ चिन्ता की विशेषता से राज्य के बाजार में सदगुणों के सहस्रों भाण्डार खोल देते हैं। विशुद्धमत और यथार्थ विचार द्वारा, वे कलह पूर्ण जगत में तृष्णा का अवरोध करके क्रोध की चिनगारियों को, अपनी चतुराई की वर्षा से बुझा देते हैं। लोगों ने इस सौभाग्यवान वृन्द को राज्य-शरीर में जल का स्थान दिया है। जब ये लोग शुद्ध-हृदय होते हैं तो मनुष्यों के चित्त से वैर और कपट की धूल मिटा देते हैं, जिससे सभा-उद्यान नवीन और हरा-भरा होजाता है। परन्तु यदि ये समता की सीमा उल्लंघन कर जाते हैं तो संसार को आपत्तियों के प्रलय-प्रवाह में डुबो देते हैं, और सभी चराचर आपदाओं की बाढ़ से, विनाश की धारा में पड़ जाते हैं। इस वर्ग का अध्यक्ष हकीम^{१०} है। जो अपने ज्ञान और कर्म की सहायता से अपने चरित्र की सम्भवता प्रदर्शित करके संसार के सुधार में कटिवद्ध

१ नायब दीवान, जो दफ्तर का अध्यक्ष होता है।

२ सेना का हिसाब रखने वाला।

३ सम्राट का दैनिक व्यय-लेखक।

४ दरबार के सामान का अधिकारी।

५ शाही कारखानों का अध्यक्ष।

६ शाही कारखानों का हिसाब रखने वाला।

७ मोहर्रिर (खजांची का)

८ घटनाओं का प्रधान लेखक।

९ खालसा भूमि का प्रधान अधिकारी।

१० तस्वीरेत्ता, दार्शनिक।

होता है। सद्रौ, मीर अद्वलौ, क़ाज़ीौ, तबीबौ, मुनजिमौ, शायरौ, रम्मालौ^१ और इसी प्रकार के लोग इस समुदाय में रहते हैं।

४—सेवक—जो राज दरबार में सम्राट् की सुश्रूषा के लिए आवश्यक होते हैं। संसार की राजन्यवस्था में यह समुदाय पृथ्वी के स्थान पर है। ये लोग परिचर्या के राजमार्ग में पड़े रहते हैं और सम्राट् के निकटवर्ती-भयस्थान के तुच्छ रज़कए होते हैं। यदि ये छल छिड़ से रहित होते हैं तो शरीर के लिए पौष्टिक रस का काम देते हैं, अन्यथा मनोरथ के मुखमण्डल पर धूल हो जाते हैं। खबासौ, कोरचीौ, शरबत दारौ^२, आबदारौ^३, तोशकचीौ^४, करकराकौ^५ तथा ऐसे ही और लोग इस वर्ग की लड़ी में पिरोये हुये हैं। जब प्रारम्भ और मौभाग्य में ये सेवक गण आपम में मिल जाते हैं तो राज्य-उद्यान गुलदस्ता बन जाता है। राजा, जिस प्रकार लोक शरीर को श्रेणीबद्ध करके सुव्यवस्थित करे, उसी प्रकार राज्य-मूर्ति को भी इन चार वर्गों के सुधार द्वारा सुप्रबन्ध से सुशोभित करे।

प्राचीन काल के बुद्धिमान वर्ग ने शासन के चार सुख्य अधिकारियों का इस प्रकार उल्लेख किया है :— पहला कर्मशील आमिल^६ जो कृपकों का रक्तक, प्रजा की चौकसी रखने वाला, देश की उन्नति करने वाला और कोप की पूंजी बढ़ाने वाला हो। दूसरा तीसार दारे-सिपाह^७ जो बिना एहमान जताये काम पूरा करने वाला हो। तीसरा मीरदाद^८ जो तृष्णा और स्वार्थपरता से रहित होकर सूक्ष्मदर्शिता और दूरदर्शिता के शिखर पर विराजमान हो, और केवल साक्षी और शपथ पर निर्भर न रह कर, तरह तरह की पूँछताछ करके लक्ष पर पहुँच जाय।

१—इसे सद्र-इजहां भी कहते हैं।
प्रधान विचार-पति तथा प्रधान-शासक।

२—३ काज़ी न्याय करता है और मीर-अद्वल सज़ा का हुक्म देता है।

४—वैद्य।

५—गणित ज्योतिष का विद्वान।

६—कवि।

७—फलित ज्योतिषी।

८—सम्राट् को भोजन कराने वाला।

६—रक्षा वर्ग का शस्त्रधारी प्रधान सेवक।

१०—११ शरबत और पानी के प्रधान सेवक।

१२—१३ वस्त्रालय और बिछोने के प्रधान सेवक।

१४—कलेक्टर और मजिस्ट्रेट।

१५—सेना की रक्षा करने वाला, सेनापति।

१६—न्यायाधीश।

चौथा जासूसः जो वर्तमान समय की घटनाओं के संबाद, विना घटाये बढ़ाये पहुँचा दे आर सत्यता एवं दूरदर्शिता के गुण को हाथ से न छोड़े ।

न्यायी राजा के लिए आवश्यक है कि वह मानव-परीक्षा के आसन पर बैठे, और पांच प्रकार के मनुष्यों को—जिनमें संसार के सब मनुष्य आजाते हैं—पहचान लेवे और फिर बुद्धि के अनुसार व्यवहार करे । १-सर्व श्रेष्ठ वह बुद्धिमान मनुष्य है जो समय की परम आवश्यक उपयोगिताओं को अपने ज्ञान से काम में लावे, और जिसके सद्गुणों का सोता केवल उसी की गली में धुसा न रह कर दूसरों की खेती बारी को भी हराभरा बनाये । केवल ऐसा शुद्ध व्यक्ति सम्राट् को परामर्श देने और राज्य संभालने के योग्य है । २-इसके बाद शुभ चिन्तक है, जिसके सत्कर्मों की सरिता उसकी गली से बाहर न जाय और दूसरों के जल-प्रदान का साधन न बने । यद्यपि ऐसा व्यक्ति दया और प्रतिष्ठा के योग्य है, परन्तु विश्वास पात्रता जैसे उच्च पद का अधिकारी नहीं है । इसमें निकृष्ट भोला भाला है, जिसकी कर्म-भुजा पर भलाई के चिह्न नहीं होते, पर बुराई तथा बुरे कर्मों की धूल से भी जिसका अंचल सौंदा नहीं होता । यद्यपि वह मान पाने योग्य नहीं है, तथापि मुख्य की छाया में बैठने का अधिकारी है । ४-इस से निकृष्टतर सुषुप्त-भाग्य है, जिसके घर में विनाश की सामग्री के अतिरिक्त और कुछ नहीं होता, किन्तु जनता उसके कष्ट से मुक्त होती है । समय का शासक, उसको निराशा के तप्त स्थान में रखकर, श्रेष्ठ उपदेशों, ग्लानि पूर्ण धिक्कारों तथा उचित ताड़नाओं द्वारा सतपथानुगमी बनावे । ५-अधमाधम वह दुष्प्रकृति है, जिसके पाप कर्म दूसरों के पापों को बढ़ाने वाले हैं, और जिसकी दुष्टता से सम्पूर्ण जगत दुःख में हो । यदि पूर्व रोगियों का उपचार दुष्प्रकृति के लिए हितकर सिद्ध न हो, तो राजा उसको कोटियों के समान पृथक् रखकर नागरिकों से उसे मिलने न दे । यदि इस हृदय विदारक दंड से उसकी धोर अज्ञान निदा भड़ न हो, तो उसको शोक के शिकंजे में कसकर घर से बाहर निकाल दे । यदि उसके नष्ट स्वभाव के लिए यह औपधि भी लाभदायक सिद्ध न हो, तो राजा उसको राज्य से बाहर कर दे और निराशा-बन में भटकने दे । यदि यह उपाय भी उसकी पापमय प्रकृति को लाभ न पहुँचावे, तो उसकी दुष्टता के साधनों—नेत्रों से दृष्टि और हाथ पैर से बल खींचले (अर्थात् अन्या करदे या

हाथ पांव काट दे)। परन्तु राजा को चाहिये कि उसके जीवन का ताना बाना तोड़ने (प्राण लेने) का साहस न करे ; क्योंकि बुद्धिमान मनोविज्ञानियों ने मानव शरीर को ईश्वरीय मन्दिर समझ कर उसको नष्ट करने की आज्ञा नहीं दी है ।

अतएव न्यायप्रिय राजा के लिए आवश्यक है, कि अपने अनुभव और सूखम दृष्टि के प्रकाश से, मनुष्यों के पद पहचान कर, कार्य संचालन करे । और इसी लिए प्राचीन काल के ज्ञानार्जकों ने कहा है कि अग्रशोची, तेजपुञ्ज शासक हर छोटे आदमी को नौकर नहीं रखते ; और जिनको इस काम के लिए स्वीकार कर लेते हैं, उन नौकरों में से हर एक को नित्य प्रति सामने आने का अधिकारी नहीं समझते ; जिनको सामने आने की आज्ञा होती है, उनमें से हर एक को अपने विछाने के पास आने के योग्य नहीं जानते । निकट जाने के अधिकारी व्यक्तियों में से हर एक आमोद-प्रमोद सभा में पदार्पण नहीं करने पाता । उपरोक्त श्रेणी का प्रत्येक पदस्थ (आमोद-प्रमोद सभा में जाने वाला) प्रतिष्ठित सभा में प्रवेश के योग्य नहीं होता । जो व्यक्ति इस सौभाग्य दृष्टि से प्रकाश प्राप्त करते हैं (महती सभा में जा सकते हैं) उनमें से हर एक गुप्त-समिति में नहीं जा सकता ; और इस विज्ञता-समिति का प्रत्येक सौभाग्यवान व्यक्ति, गजकीय विषयों पर विचार करने वाली गुप्त राष्ट्रपरिषद में स्थान नहीं पाता ।

ईश्वर को धन्यवाद है, कि हमारं समय का सम्राट् उपरोक्त उत्तम गुणों से ऐसा अलंकृत है, कि यदि उनको इन सब का सर-इ-दफ्तर कहें तो अत्युक्ति न होगी । वह अपने ज्ञान के प्रकाश से, मनुष्यों के पद पहचान कर उनके पुरुपार्थ का दीपक जलाता है, और बिना किसी प्रकार की कठिनाई के प्रसन्न बदन अपने ज्ञान को कर्भ-सौन्दर्य से विभूषित करता है । किसकी सामर्थ्य है कि वाक्-शक्ति की गुनियाँ^१ से, उसके आध्यात्म जगत की अग्रगण्यता^२ प्रवं पवित्र—विस्तीर्ण मार्ग की कार्य पदुता का अनुमान कर सके ; और यदि कुछ हाल वर्णन किया जाय और कोई भेद दर्शाया जाय तो श्रोता सुनने का बल कहाँ से लाये और समझने की शक्ति किससे मांगे । तो मेरे लिए यही अच्छा है कि मैं इस प्रयत्न से अपने को हटा लूँ और उसके बाह्य जगत की कुछ विलक्षणताएँ चित्रित करने पर सन्तोष करूँ । अतः मैं उसके शाला विभाग की नीति, सेना विभाग

१ बदर्ह का एक खास औज्ञार जिससे वे लकड़ी की ठीक २ नाप करते हैं ।

२ अकबर दीन इस्लाही मत का प्रवर्त्तक

था । उसने अनुयायियों को जो चमत्कार दिखलाये थे, उनमें से कुछ का उल्लेख इस ग्रंथ के ७७ वें आर्हन में है ।

के नियम और साम्राज्य विभाग की व्यवस्था—क्योंकि राज्य के कारखाने को सभी बातें इन्हीं तीन विभागों के अन्तर्गत हैं—वर्णन करता हूँ; और कर्मण्य अन्वेषकों के लिए एक भेट तैयार करता हूँ; जिसका प्रत्येक क्लिप मालूम होने वाला अंश सरल, और आसान मालूम होने वाला भाग कठिन है।

अनुभवी कार्यशील एवं प्राचीनकाल के इतिहासज्ञ इस चिंता में हैं कि पूर्वकालीन शासकों ने, बिना इन सुबोध विधानों के, राज-कार्य को कैसे सुव्यवस्थित किया और राज्य-उपचार बिना इस ज्ञान-स्रोत की सिंचाई के कैसे हरा भरा रहा। इन्हीं कारणों से यह उत्कृष्ट ग्रन्थ तीन प्रकार की नीतियों से परिष्कृत किया गया, और मेरे साथ जो उपकार किये गये हैं उनके लिए इस पुस्तक के द्वारा कुछ कृतज्ञता प्रकट की गई है।

लोगों^१ की जानकारी के लिए कुछ हिन्दी शब्दों का भी प्रयोग किया गया है। उनके उच्चारण की सुविधा के लिए मात्राएं लिखदी हैं। इससे अन्वेषी कष्ट न उठायेंगे और शुद्धोच्चारण में गड़बड़ी भी न होगी। अलिफ़, लाम और इसी प्रकार के अन्य वर्णों के नाम लिख कर भ्रम का मार्चा घिस दिया है। कुछ को मनकूता (बिन्दु वाला) लिख कर स्पष्ट कर दिया है। समाञ्छति वर्णों को सामान्य रीति से बयान किया है। वे अक्षर जो केवल फारसी भाषा के थे, फारसी शब्द से आबद्ध करके न्यारे कर दिये, जैसे पदीद शब्द की बे, चमन की जीम, निगार की काफ़ और मुज्हदा की ज्हे। कभी उच्चार्यमाण अक्षर पर, तीन बिन्दु लगाकर भेद प्रगट कर दिया है। जो वर्ण फारसी भाषा में नहीं हैं, उनको हिन्दी अक्षर कह कर सन्देह दूर कर दिया। ऐसे अक्षरों का अन्तर, जैसे रुए में इये और दस्त में ते है क्रमशः तहतानी और फाँकानी लिखकर प्रकट कर दिया है। अदब की बे का प्रयोग प्रायः स्पष्ट होता है, अतएव मैंने उसे केवल बे लिखा है। नून, वाव, याय तहतानी, और हे में से प्रत्येक वर्ण को, जो जहां पर जिह्वा से योंही स्पष्ट उच्चारित हुये हैं, बिना किसी बन्धन के लिखा है। नून, जो नाक के सहारे बोली जाती है—जैसे जां की नून—नून-इ-खस्ती या नून-इ-पिनहां कह कर भिन्नता प्रकट करदी है। कुछ अक्षर ऐसे हैं, जो लिखे जाते हैं, पर बोले नहीं जाते—जैसे फरखुन्दा

१ यह पैरा केवल फारसी भाषा-भाषियों के लिए उपयोगी है। मूल ग्रन्थ में प्रायः अनेक शब्दों को इस पैरे में

बतलाए हुये नियमों से स्पष्ट किया गया है।
अनुवादक।

को है—उनको मक्तुबी बयान किया है। पेश और जेर, जिनका भेद अप्रकट है, मभूल शब्द से आबद्ध करके उच्चारण स्थित कर दिया है। अलिक के पूर्व वर्ण में जबर अवश्य होता है और मखफी भी साकिन होता है, इस लिए उसे किसी मात्रा से आबद्ध नहीं किया है।





प्रथम ग्रन्थ

राजकीयशालाओं का वर्णन ।



प्रथम ग्रन्थ ।

राजकीयशालाओं का वर्णन ।

आईनः १

राजकीयशाला ।

उच्च विचारशोल और महत्वाकांक्षी वह व्यक्ति है, जो सूष्टि के सभी परमाणुओं को, बिना किसी को विशेषता दिये, ईश्वरीय शक्ति की विचित्रता के आविर्भाव का स्थान जाने, और तदनुसार ही अपना भीतरी और बाहरी आचरण बनाये तथा बुद्धिमानी में अपने और परगणों का समुचित सम्मान करे। यदि उसको ये गुण प्राप्त न हों, तो उसके लिए आवश्यक है कि वह संसार के लड़ाई भगड़ों में न पड़े और शान्ति-पथ प्रदण्ड करे। यदि वह विरक्त हो तो तिज को श्रेष्ठ गुणों से अलंकृत करे; और यदि गुहस्थों में से हो तो उसके प्रवन्ध में आसन्तों की तरह दत्तचित्त हो और निर्लिपि-भाव से जीवन-निर्वाह करे।

प्रतिष्ठा, चाहे आध्यात्मिक हो अथवा लौकिक, छोटे-बड़े कार्यों को करने से नहीं रोकती; वरन् उनके करने को वह विश्वनिर्माता न्यायकारी की श्रेष्ठ उपासना समझती है^१। यदि वह स्वयम् अपने सब काम न कर सके, तो उसको चाहिये कि तीव्र सूक्ष्म दृष्टि और यथार्थ अनुभव द्वारा एक दो ऐसे मनुष्यों को

१—मूल-ग्रन्थ में “आईने-मंज़िल आबादी” पाठ है, जिसका अर्थ राजकीय शालासमृद्धि का “आईन”, होता है। पाठकों की सुविधा के लिए, ब्लाकमैन के (अनुबाद के) अनुसार आईनों का वर्गीकरण

संख्या-क्रम से किया गया है, और “आईने-मंज़िल आबादी” का भावार्थ दो भिन्न शीर्षकों द्वारा प्रकट किया गया है।

२—अकबर इम वाक्य को बहुधा कहा करता था।

चुन ले, जो चतुर, बुद्धिमान, धार्मिक और साम्प्रदायिक एवं जातिगत मामलों में निष्पक्ष, हृदय-पारखी तथा उद्घोगी हों, और उनकी निगरानी पर काम छोड़ दे ।

जो शासक वडे कार्यों के अतिरिक्त और कुछ नहीं करता, बुद्धिमान उसकी गणना राजाओं में नहीं करते । यद्यपि कुछ निष्पक्ष न्यायाधीश, सांसारिक माया से कीजे हुये ऐसे शासक को, ऐसे काम करने पर, कम्य मानते हैं; क्योंकि अधिकतर अर्थन्तोलुप चाटुकार—जो धूरता से अपने को सज्जनों में शामिल कर लेते हैं—पद-भेद की बातें बनाते हैं,^१ और वाहा आडम्बर के प्रेमी शासकों को (प्रमाद निद्रा में) गुला देते हैं; उनकी केवल यही आकांक्षा रहती है कि स्वयम् लेन-देन की दृकान मजालें और अपना घर भरलें । भाग्यवान शासक छोटे और बड़े मामलों में भेद नहीं मानते; वे ईश्वरानुमोदित सहायता से लोक परलोक का भार अपने माहस के कन्धे पर रखते हैं, और निश्चिन्त और निर्लिप्त रहते हैं, जैसा कि हाल हमारे समय के बादशाह का है । वह अपनी ज्ञान विचक्षणता से शालाओं (कारखानों) की समुद्धि में—जो कि लोक रक्षा की पहली सीढ़ी है, और जिन पर अगले शासक^२ अपने बड़प्पन के कारण बहुत कम ध्यान देते थे—चित्त लगाता है, और प्रत्येक स्थान के लिए उपयुक्त नियम निर्धारित करता है । और अपने इस कर्तव्य-पालन को अद्वैत न्यायकारी के कृष्ण-भाजन होने का साधन समझता है ।

इस अद्भुत कार्य की सफलता दो बातों पर निर्भर है:—प्रथम, ज्ञान और सूक्ष्म दृष्टि के द्वारा, लोकोपकारी राज-आज्ञाओं को पवित्र हृदय मन्दिर से तैयार करके अस्तित्व-सभा में लाना; दूसरे, सत्प्रकृति और प्रयत्नशील व्यक्तियों को इन्हें सौंपकर उनके कार्यान्वित होने का ध्यान रखना ।

यद्यपि शालाओं के बहुत से कर्मचारी सेना-विभाग में वेतन पाते हैं

१—अर्थात् कहते हैं कि यह कार्य छोटा है, राजा के करने योग्य नहीं ।

२—हिन्दुओं के इस समय तक के प्राप्त इतिहास में, जिन राजाओं ने शाला-विभाग पर अध्यधिक ध्यान दिया और उम को उच्चति के शिखर पर पहुँचाया, उनमें सम्राट् चन्द्रगुप्त मौर्य का नाम विशेष उल्लेखनीय है । आज से लगभग २५०० वर्ष

पूर्व उसके शासन-विधान ‘कोटिल्य का अर्थ शाला’ को देखकर आश्चर्य होता है । मेगस्थनीज्ञ के साच्चे से भी इस बात की पुष्टि होती है । इतिहासकार विन्सेंट-स्मिथ ने मौर्य-शासन की प्रशंसा करते हुये उसके सुसंगठित होने का सारा श्रेय चन्द्रगुप्त मौर्य तथा उसके मंत्री चाणक्य को ही दिया है ।

तथापि सन् ३६ इलाही^१ में इस (शाला) विभाग का व्यय तीस करोड़ इक्यानवे लाख, छियासी हजार सात सौ पञ्चानवे दाम^२ था। इस राज्य का व्यय उसको आय के अनुसार नित्य प्रति बढ़ता जाता है। सौ से अधिक कारखाने हैं, और उनमें से हर एक कार्यालय बड़े नगर के सदृश तो क्या, एक देश के समान है। सम्राट् के निरन्तर ध्यान देने से उनमें बढ़िया सामान रहता है, और सदा बढ़ता रहता है। सौभाग्य और प्रहाँ के प्रताप से जितनी जितनी सम्पत्ति बढ़ती जाती है, वात्सल्य और दयालुता की भी उतनी ही उतनी बढ़िया होती जाती है।

कुछ व्यवस्थाओं को भावी सत्यान्वेषियों के लिए, उपहार के तौर पर, निर्मित करता हूँ और इस प्रकार दूसरों में अपने ज्ञान और कर्म का दीपक जलाता हूँ। कुछ व्यवस्थाएं जो सामान्य प्रकार की हैं और विधान के तीनों विषयों^३ में मम्मिलित होने के योग्य हैं—मैंने उनका उल्लंघन शालाओं के वर्णन में ही किया है।

आईन २।

राज्ह कोष ।

प्रत्येक सूद्धमदर्शी बुद्धिमान जानता है, कि समय की आपदाओं का हटाना और जनता के कष्टों का दूर करना, ईश्वर की मर्व श्रेष्ठ उपायना और सर्वोत्तम आराधना है। ये दोनों बातें कृपी की उन्नति, गज-कार्यालयों की परिपूर्णता,

१—अकब्र ने जो सन् इलाही (सौर-सम्बत्) चलाया था उसका आरम्भ १५ फरवरी सन् १५२६ ई० से होता है। इसके अनुसार सन् ३६ इलाही में ईसवी सन् १५४५ था।

२—अकब्री रूपया ४० दाम में चलता था। इस हिसाब से ३०,६१,८६,७६५ दाम, ७७२६६६४^४ रूपये के बराबर होते हैं। आजकल के हिसाब से अकब्री रूपया—२ शिलिङ्ग ३ पैस अंगरेजी=१॥।—) हिन्दु-स्तानी के होता है। विनिमय की कमी बेशी के कारण रूपए की दर में भी कमी बेशी होती रहती है।

३—सम्पूर्ण ग्रन्थ तीन विषयों में विभाजित है, यथा १—शालाओं का वर्णन, २—सैन्य विभाग का वर्णन और ३—साम्राज्यशासन का वर्णन।

४—श्रीमद्भागवत् में भी कहा है कि सज्जन पुरुष संसार के कष्टों को दूर करने के लिए स्वयं कष्ट सहने हैं, अर्थात् स्वयं दुःख उठाकर लोकहित का साधन करते हैं। क्योंकि यह विश्वात्मा की सर्वोक्तुष्ट आराधना है। यथा—

तप्यन्ते लोक तापेन, प्रायशः साधवोजनाः । परमाराधनं तद्विः, पुरपस्याखिलात्मनः ॥

(श्रीमद्भागवत् स्क० ८)

राज्य के प्रयत्नवान् महारथियों की तत्परता और सेना की शुभ कार्यपरायणता पर निर्भर हैं। और उपरोक्त चारों बातें राजा के यथार्थ-विचार, जनता के पालन-पोषण, उत्तम धन के संचय और अन्तःकरण के आज्ञानुसार व्यय करने पर अवलम्बित हैं। इससे नागरिकों और ग्रामीणों के लिए जो बातें होनी चाहिये वे प्राप्त होती हैं, और उक्त दोनों समुदायों की सम्यता और संस्कृति की पूर्ति होती है। अतएव न्यायी शासकों के लिए अनिवार्य है कि पहिली चीजों का संग्रह करें और पिछले समुदायों की रक्षा करें। कुछ लोग, जिस प्रकार विरक्त त्यागियों के लिए धन संचय करना एवं उसकी अधिकता की चिन्ता करना घृणित मानते हैं, उसी प्रकार वे, उनके विरुद्ध गृहस्थों के लिए उसका एकत्र करना आवश्यक समझते हैं। पर यह प्रलाप केवल वाह्यदर्शक अदूरदर्शियों का है, क्योंकि (विरक्त और गृहस्थ) दोनों ही, समय की आवश्यकता की पूर्ति के लिए दौड़-धूप करते हैं। दीन सन्तोषी, अपने भोजन वस्त्र के लिए इतनी प्रङ्गी चाहते हैं, जिसमें उनको ज्ञान-चिन्तन में बल मिल सके और शीतोष्ण से बचाव हो सके। दूसरे समुदाय का अलम् इस बात पर होता है कि कोष को धन से भर, ऐश्वर्य की सामग्री एकत्र करे तथा अन्य कार्य सोचे।

उपरोक्त विचार से, जिस समय सम्राट् के ज्ञान चक्षु खुले और उसने गुरुतर कार्यों के सुप्रबन्ध में कुछ ध्यान देना आरम्भ किया, तो ख्वाजासरारै एतमाद खां को परामर्श के योग्य समझ कर अपने हृदय का भंड बतलाया। उसके अनुभव-द्वारा सम्राट् की कुछ पवित्र हार्दिक इच्छा कार्य रूप में परिणित हुई, फिर उसमें क्रमशः उन्नति होती गई, और उसके उत्तम साधन उपस्थित होते गये। हर प्रकार की भूमि के कर की जांच की गई, और सत्प्रकृति अनुभवी व्यक्तियों द्वारा वह पड़ताल सफलता पूर्वक समाप्त हुई।

१—ख्वाजासरा, रनिवास के प्रधान नपुंसक दास को कहते हैं। एतमाद शब्द का अर्थ विश्वास और भरोसा है। अगले समय में, रनिवामों में ऐसे दासों के रखने का चलन था। एतमाद खां का असली नाम फूलमलिक था। सलीम शाह (१५४५-१५५३) की सेवा के उपलक्ष में उसको मुहम्मद खां कि उपाधि मिली थी। उसके बाद वह अकबर की सुश्रूपा में लगा। जब अकबर के पालक-पिता शमशुद्दीन मुहम्मद

अतगा खां का देहान्त होगया, तो उसने (अकबर ने) अर्थ-विभाग पर ध्यान देना आरम्भ किया। जब उसे मालूम हुआ कि माल का मोहकमा चोर-घर बन गया है, तो उसने फूल मलिक को उसकी निगरानी के लिए नियत किया और एतमाद खां की पदवी प्रदान की। इसके विशेष विवरण के लिए द्वितीय ग्रन्थ में मंसबदारों की सूची में नं० ११६ देखिए।

ऐसी मामिकता के साथ— वह भूमि जिसमें अपने और पराये का अन्तर नहीं था—उसने खालसा की जमीन से जागीर की जमीन पृथक करदी। एक एक करोड़ दाम की मालगुजारी के लिए उसन एक एक परिश्रमी सत्यानिष्ठ अधिकारी नियत किया, और सहायता के लिए निर्लोभी वितक्की (मोहर्रर) माथ कर दिया तथा हर एक के लिए एक ईमानदार खजांची मुकर्रर किया। दयालुता और कृपकों की रक्ता के ख्याल से, सम्राट् ने अधिकारियों को आज्ञा दी कि वे किसानों को जरं-खालिस (पूरी तौल के सिक्के) अदा करने के लिए आध्य न करें और जो कुछ भी वे दें उसके लिए मोहर लगा कर रखीद दें। इस उत्तम व्यवस्था द्वारा उसने अधिकारियों के भ्रम का मोरचा घिस दिया, और प्रजा ने नाना प्रकार के अत्याचारों से छुटकारा पाया। सम्पदा बढ़ गई और राज्य समृद्ध हो गया। जब माल (अर्थ) का प्रधान सोता साफ हो गया तो एक ईमानदार और परिश्रमी व्यक्ति प्रधान कोपाध्यक्ष के पद के लिये चुना गया, और एक दारोगा तथा एक मुहर्रर उसकी सहायता के लिए नियत किये गये। दूरदर्शिता कार्य रूप में परिणित हुई और कार्य-संचालन के लिए नियम निर्धारित हुए। जैसे, जब प्रत्येक प्रान्तीय कोपाध्यक्ष के पास दो लाख दाम (५००० रु.) जमा हो जाय, तो राज दरबार में लाकर उस (प्रधान कोपाध्यक्ष) को सौंप दें, साथ ही धन के व्योंग की सूची भी साथ लावें। पेशकश^१ जमा करने के लिए एक अलग खजांची नियुक्त किया गया। लावारिसी माल (उत्तराधिकारी रहित-सम्पत्ति) के लिए एक और कोपाधीश नियत किया। नज़्र में आये हुए धन के लिए भी एक निपुण व्यक्ति रखवा गया। तुलादान एवं दान पुण्य के मप्ये देने के लिए एक और शुभ चिन्तक नियुक्त किया। अनेक प्रकार के व्यय के लिए उत्तम नियम बना दिये, और सत्यशील कार्याध्यक्ष, योग्य दारोगे, ठीक लिखने वाले वितक्की पृथक पृथक नियत किये। वार्षिक-व्यय का मप्या, जमा का

१—पेशकश का तात्पर्य उस नियत भेट के धन से है, जो राज्य की अधीनस्थ जागीरें आदि, सम्राट् को अदा करती थीं। भारतवर्ष में इसी तथा ऐसे ही और अनेक नामों से बहुत दिनों तक कर वसूल किया जाता रहा है, यथा:—राज हक, ज़ोर तलबी, सार्वदेश मुखी, खिचड़ी, कुदनी, घास दाना, पेशकश, और खिराज आदि। आजकल

इनमें से कई राजकर बन्द हैं। देशी रियासतें जो कर भारत सरकार को देती हैं वह खिराज कहलाता है। पेशकश के नाम से अब भी कई राज्यों में कर लिया जाता है। जूनागढ़ राज्य को कई अधीनस्थ छोटे राज्य ज़ोर तलबी नामक कर देने हैं। गुजरात में एक दो राज्यों से अब भी खिचड़ी के नाम से कर लिया जाता है।

खजांची (प्रधान कोपाध्यक्ष) प्रत्येक खर्च के खजांची को देता है और ठीक लिखा पढ़ी करके रसीदें आदि ले लेता है। हिसाब लिखने का तरीका आसान होगया और राज्योदयान हरा भरा हो गया। थोड़े ही समय में खजाने भर गये, सेनाएं बढ़ गई और कुटिल राजद्रोही आज्ञा-पथ के अनुगामी हो गये।

इगन और तूरान में केवल एक खजांचों रहता है, इस में हिसाब-किताब में बड़ा कष्ट उठाना पड़ता है। परन्तु यहां माल और कार्य की अधिकता के कारण उपार्जित-द्रव्य के निरीक्षण के लिए बारह कोपाध्यक्ष नियत किये गये हैं; जिनमें से नौ तरह तरह की नगदी के लिए हैं, और तीन मणि मुक्ता, सोना और जड़ाऊ सामान जमा करते हैं। कोपों का परिमाण इसमें कहीं अधिक है कि इस वृत्तान्त के साथ उसका भी उल्लेख किया जा सके। सम्राट्, अपनी गुण-प्राप्तियों से, कार्यों के उपलक्ष में लोगों पर कृपा करता अथवा धिक्कारता है; इस लिए काम-काज में चहल पहल रहती है।

हर कारखाने के लिए एक अलाहिदा खजांची नियत किया गया, और उनकी संख्या सौ के लगभग हो गई है। सावधान कार्य-अभिज्ञ, दिन दिन, मास मास, फस्त फस्त और साल साल के लेन-देन का हिसाब दुरुस्त रखते हैं; जिस से संसार का बाजार गर्म रहता है।

पुनः सम्राट् की आज्ञा से, सौभाग्यवान सत्यशील कर्मचारियों में से एक व्यक्ति, दरबार-आम में, सदा रुपर्यं और मोहरें तैयार रखता है, जिस में बहुधा अभिलापी प्रतीक्षा का विना कष्ट उठाये सफल मनोरथ हो जाते हैं। एक करोड़ दाम गजभवन के अंगन में प्रस्तुत रहता है। एक एक हजार दाम टाट की थैलियों में भर जाते हैं; ऐसी हर थैली को सहसा कहते हैं। इन थैलियों का ढेर गंज कहलाता है। इसके अतिरिक्त सम्राट् बहुतसा सूपया अपने खासों^१ को सौंप देता है, जो समय कुसमय के लिए तैयार रहता है, और कुछ लोग बहले (थैली) में रखकर हाथ में लिए रहते हैं, इस कारण प्रचलित भाषा में उसको खर्जे-बहला कहते हैं।

ये समस्त कृपाएं, सम्राट् की अद्भुत उदारता और हर प्रकार में अपनी प्रजा को पालन करने के कारण से हैं। परमान्मा करे, वह हजार वर्ष जिये।

आईन ३।

रत्नकोष ।

वह कितना है और कैसा है—यदि मैं यह वर्णन करने लगूं, तो बहुत समय लगेगा। अतः उसके सम्बन्ध में थोड़ा सा हाल लिखकर ज्ञान का वाजार सजाता हूँ और हर खतिहान से एक बाती उठाता हूँ।

सम्राट् ने इस विभाग के लिए एक बुद्धिमान, सन्तोषी और कार्यपरायण को पाठ्यक्रम नियत किया। और उसकी सहायता के लिए एक सद्प्रकृति एवं कार्यपट वितक्ची, एक भाग्यवान और परिश्रमी दारोगा और कई चतुर जौहरी मुकर्गर किये। उसने इन्हीं चार मतभों के आधार पर इस बड़े कागजाने की बुनियाद रखी। इन्होंने हर कोटि के रत्नों को श्रेणी-बद्ध करके सन्देह का मल गाफ़ कर दिया।

लाल—जिस लाल का मूल्य १००० मोहर से कम नहीं होता पहली श्रेणी में रखा जाता है; ६६ से ५०० मोहर तक का दूसरी में; ५६ से ३०० तक का तीसरी में; २६ से २०० तक का चौथी में; १६ से १०० तक का पाँचवीं में; ६ से ६० तक का छठी में; ५६ से ४० तक का सातवीं में; ३६ से ३० तक का आठवीं में; २६ से १० तक का नवीं में; ६^३ से ५ तक का दसवीं में; ६^३ से १ तक का ग्यारहवीं में; ६^४ मोहर से ६^४ लपण तक का बारहवीं में। लाल के इस में अधिक दर्ज नहीं रखे हैं।

होरा^१—पन्ना और लाल-नीले याकृत निम्नलिखित रीति में क्रमान्वयत होते हैं:— पहली श्रेणी—३० मोहर से अधिक मूल्यवान; दूसरी श्रेणी—२६^३ मोहर से १५ मोहर तक; तीसरी श्रेणी—१५^३ से १२ तक; चौथी श्रेणी—१५^४

१—कोहनूर—श्रक्कर के रत्न-कोप में जगत् प्रसिद्ध कोहनूर हीरे का साफ़ साफ़ पता नहीं चलता। यह उस समय किसी और नाम से एकारा जाता होगा। इसके इतिहास के सम्बन्ध में लोगों के विभिन्न मत हैं। कोई कोई सज्जन तो इसे मूसली-पद्म में गोदावरी के तट पर मिला हुआ बतलाते हैं और कहते हैं कि यह अंगराज कर्ण के पास था। किसी किसी का कहना है

कि श्रीकृष्ण का कोस्तुन मणि यही है और चलते चलते उज्जेन के राजा विक्रमादित्य के पास पहुँचा। (‘विश केष्टा’ तथा शब्द सामग्र,) जो भी हो, प्राचीन मंस्कृत ग्रन्थों में ऐसे विलक्षण मणियों का उल्लेख मिलता है। पर यह नहीं कहा जा सकता कि उनमें से कोहनूर का किस से सम्बन्ध है।

कोहनूर का पता बाबर के समय में चलता है, उसने अपने आत्म-चरित में

से १० मोहर तक; पाँचवीं श्रेणी—६^३/_४ से ७ मोहर तक; छठी श्रेणी—६^३/_४ से ५ मोहर तक; सातवीं श्रेणी—४^३/_४ से ३ मोहर तक; आठवीं श्रेणी—२^३/_४ से २ मोहर तक; नवीं श्रेणी—१^३/_४ से १ मोहर तक; दसवीं श्रेणी—८^३/_४ रुपए से ५ रुपए तक; ग्यारहवीं श्रेणी—४^३/_४ रुपए से २ रुपए तक; बारहवीं श्रेणी—१^३/_४ रुपए से १ रुपए तक।

इसका दो स्थानों पर उल्लेख किया है। एक तो, जब हुमायूं बीमार पड़ा था तब स्वाजा खूनीफ़ा तथा उसके अन्य मिठों ने उस (हुमायूं) के स्वास्थ्य लाभ के लिए बाबर से कहा था कि अपने पास की संसार की सबसे अमूल्य वस्तु उस हीरे को—जोकि उसको इत्राहीम की पराजय के बाद मिला था और जिसको उसने हुमायूं को देदिया था,—दान करदे। (Memoirs of Zahiruddin Mohammad Baber, 1925, Vol II Appendix D, Page 442).

दूसरे ४ मई १५२६ ई० के घटनाक्रम में बाबर लिखता है:—“बिकरमाजीत—एक हिन्दू राजा—जोकि ग्वालियर का राजा था और मौर्य वर्ष से भी अधिक पहले से उस देश पर (उसका बंश) शासन करता था। जिस युद्ध में इत्राहीम पराजित किया गया था उसी में बिकरमाजीत भी जहनुम को पहुँचाया गया था। बिकरमाजीत का परिवार तथा वंश के मुख्य मुख्य मनुष्य उस समय आगरे में थे। जब हुमायूं पहुँचा तो बिक्रमाजीत के आदमियों ने भागने की चेष्टा की, किन्तु उन दलों ने जिनको कि हुमायूं ने उक्त परिवार की चौकसी के लिए तैनात किया था,—गिरफ्तार कर लिया और हिरासत में ले लिया। हुमायूं ने उनको लूटने खस्तोने नहीं दिया। उन्होंने स्वेच्छा से हुमायूं को एक पेशकश भेट की। जिसमें

जवाहरात और बहुमूल्य पत्थर थे। उनमें वह प्रसिद्ध हीरा भी था जो सुल्तान अलाउद्दीन द्वारा प्राप्त किया गया था। यह इतना मूल्यवान है कि एक रत्न-पारखी ने उसका मूल्य संसार भर का आधे दिन का व्यय लगाया। यह तोल में लगभग ८ मिस्रकाल है। जब मैं आया तो हुमायूं ने मुझे उसको पेशकश के तौर पर भेट किया, किन्तु मैंने उसको पुरस्कार के रूप में देदिया।” (Memoirs of Baber, Vol II, P. 193).

अब प्रश्न है कि ग्वालियर राज विक्रमादित्य को अलाउद्दीन (१२६६-१३१६) से कैसे मिला? “राजपूताना का इतिहास” (जिल्द पहली पृष्ठ २३८, लें० म. म. राय बहादुर पै० गोरीशङ्कर हीराचन्द्र ओझा) देखने से मालूम होता है:—“दिल्ली की तंबरों के वंशजों की दूसरी शाखा के तंबर वीरसिंह ने विक्रमी संवत् १४३२ (१३७५ ई०) के आम पास दिल्ली के सुल्तान फ़िरोज़शाह तुगलक की सेवा में रहकर ग्वालियर पर अपना अधिकार जमाया, और अलुमान १८० वर्ष बाद मानसिंह के पुत्र विक्रमादित्य के समय वह क़िला पीछे मुमलमानों ने ले लिया।” यद्यपि कोई प्रमाण मौजूद नहीं है तथापि अनुमान से मालूम होता है कि तंबर वीरसिंह अथवा उनके और किसी पूर्वज या उनकी संतति ने अपनी सेवा के उपलक्ष में दिल्लीश्वर से उसे पाया होगा अथवा और

मोती--ये वह मूल्य रत्न कांति को दृष्टि से १६ श्रेणियों में विभाजित हैं और परख की लड़ियों में पिरोंये गये हैं। ३० माहर तथा उसमें अधिक मूल्य वाले, वीस वीम मोती सूत में पिंगकर पहली लड़ी बनाई गई है; २६४ मो० से १५ किसी उपाय से तुगलक दंश से प्राप्त किया होगा। तुगलक दंश के शासकों को अलाउद्दीन से सिला होगा।

अब विचारणाय विषय यह है कि अलाउद्दीन को मालवा के किम हिन्दू राजा से कोहनूर मिला। मालवा में भी अलाउद्दीन (१०२७ ई०) नामक एक शासक हुआ है। परन्तु यहाँ पर उससे अभिप्राय नहीं है। यहाँ पर तो अलाउद्दीन शिलज्ञी से तात्पर्य है (Erskine's Memoirs of Sultan Babur, 1918, Vol. 2 P. 191)। खुसरो अलाउद्दीन का समकालीन था। वह प्रभिन्न फारसी लेखक ओर कवि था। उसने अपने ग्रंथ “आणिका” में लिखा है कि जब सुल्तान अलाउद्दीन के बज़ीर ऐनुलमुलक (छूलमलिक कास्तर) ने मालवा के राजा को क्या या महलक देव का पराजित किया था, तो अलाउद्दीन ने समाचार पाने पर दिल्ली में सात दिन तक रोशनी करवाई थी (History of India by Elliot and Dowson, Vol. 3 P. 550), ‘आईने-अकबरी’ के तीसरे ग्रंथ के अनुमार मालवा के शासकों में उस समय हरनन्द था। कैम्बिज हिस्ट्री ऑफ इण्डिया जिल्द ३ घ० १११ के अनुमार इस हरनन्द का ही नाम मुमलमान ऐतिहासिकों ने कोका लिखा है। अनुमान होता है कि इसी हरनन्द से ऐनुलमुलक ने कोहनूर हीरा लिया होगा।

जो कुछ भी हो, इसमें संदेह नहीं कि एक विलक्षण हीरा सन् १३०४ ई० के पहले से १५५५ ई० तक मालवा, ग्वालियर और दिल्ली के शासकों के पास रहा है। अकबर और जहाँगीर के समय में उसका पता नहीं चलता।

“शाहजहाँ-नामा” के लेखक इनायत खाँ के अनुमार तग्बताऊस में एक हीरा १४ लाख रुपए का लगा था। पर यह कोहनूर नहीं मालूम होता। “ए फारागटिन इम्पायर” (A forgotten Empire by Sewell P. 399) के अनुमार कोहनूर बीजापुर के अली आदिल शाह ने कृष्णा नदी के नट पर कोलूर में पाया था। इतिहासकार फैरिया सूज़ा के अनुमार नालीकोट में १५६५ ई० में राम राजा के मारे जाने के बाद विजयनगर का लूट में एक हीरा अली आदिल शाह को मिला था, जो साधारण श्रेणी के बराबर था। राम राजा उसे अपने घोड़े के मुंह के श्वासार में लगाता था। १६५६ ई० में मुगल सेनापति मीर जुमला उस तरफ माम्राज्य शापित कर रहा था। उसने उसे पाकर शाहजहाँ को भेट के रूप में दिया था। परन्तु ‘शब्दमासार’ (१० ६५१) के अनुमार “मोलहवीं शताब्दी के आरम्भ में यह हीरा ग्वालियर के एक राजा ने गोलकुंडा के एक बादशाह को दिया था।” १६५५ ई० में टैवरनियर ने इसे सम्राट ओरझ़न्ज़ेव के यहाँ देखा था और उसके सम्बन्ध में लिखा है:—“यह

कोहनूर



जैसा टैवरनियर ने देखा था।

हीरा मुगल महान् के अधिकार में है। उसने भुझे अन्य हीरों के साथ इसे भी

मोहर तक दूसरी लड़ी में; $14\frac{3}{4}$ से १२ मो० तक तीसरी में; $11\frac{3}{4}$ से १० मो० तक चौथी में; $6\frac{3}{4}$ से ७ मो० तक पांचवीं में; $6\frac{3}{4}$ से ५ मो० तक छठी में; $4\frac{3}{4}$ से ३ मो० तक सातवीं में; $2\frac{3}{4}$ से २ मो० तक आठवीं में; $1\frac{3}{4}$ मो० से १ मो० तक नवीं में; १ मो० से कम ५ रु० तक दसवीं में; ५ रु० से कम २ रु० तक ग्यारहवीं में; २ रु० से कम $1\frac{1}{4}$ रु० तक बारहवीं में; $1\frac{1}{4}$ रु० से कम ३० दाम तक तेरहवीं में; ३० दाम से कम दिखलाने की कृपा की। मुझे इसे तौलने की भी आज्ञा मिली। मैंने निश्चय किया कि यह $37\frac{6}{7}$ रु० या $21\frac{1}{4}$ कैरट का है। जब यह कटा नहीं था तो मेरे पूर्व कथनानुसार ६०७ रु० या $71\frac{3}{4}$ कैरट का था। यह पथर वैसी आकृति का है जैसी कि अंडे को बीच से काटने पर होजाती है” (Travels In India by Tavernier 1925 Vol. 11, P. 97)। $27\frac{6}{7}$ रु० प्रलोरेनटाइन

कैरट $26\frac{1}{4}$ इंग्लिश कैरट के बरावर होते हैं। हारटेनज़ियो बोर्जियो (Hortensio Borgio) नामक एक विनीशियन के बुरी तरह से खरादने के कारण उसकी तौल में कमी होगई।

$17\frac{3}{4}$ ई० में ओरंगज़ेब के दुर्बल वंशज मुहम्मद शाह से उसे नादिर शाह प्राप्त था। उसीने इसका नाम कोहनूर रखा। $17\frac{4}{4}$ ई० में नादिर शाह के क़लात में मारे जाने पर कोहनूर उसके पौत्र शाहरुख को मिला। $17\frac{5}{4}$ ई० में काबुल में दुर्गन्धि वंश के संस्थापक अहमद शाह के पास आया। उससे उसके पुत्र तैमूर को, जो काबुल में आकर रहा था, मिला। फिर उसके बाद $17\frac{6}{4}$ ई० में उसके पुत्र शाहज़मां और फिर उसके तीसरे भाई सुख्तान शुज़ा को मिला। शाह शुज़ा को काबुल की गही पर बैठने और मुहम्मद के गही से उतारे जाने तथा क़ैद किये

जाने के बाद १८०६ में इलिंग्स्टन ने उसे शुज़ा को कंकण में पहने हुये देखा था। उसने लिखा है कि कोहनूर उसी शक्ल का था, जैसा कि टैवरनियर का लेख है। (Account of the Kingdom of Kabul, Ed. 1907, Vol. II, P. 325, note.) अन्त में शुज़ा को दोस्त मुहम्मद ने गही से उतार दिया। शाहशुज़ा भाग कर काश्मीर पहुँचा, जहाँ के शासक अता मुहम्मद ने उसे क़ैद कर लिया।

१८१२ में शाह शुज़ा आर खान ज़मां के परिवार लाहोर पहुँचे। पंजाब के शासक रणजीत सिंह से शुज़ा की बेगम ने प्रार्थना की—“यदि आप मेरे पति को छुड़ादें तो मैं आपको कोहनूर हीरा दे दूँगी।” बन्धन से मुक्त होने पर शुज़ा बातें बनाने लगा। अन्त में एक दूसरे ने पगड़ी बदली। रणजीत सिंह ने उसके जीवन-निर्वाह के लिए पंजाब में जागीर नियत करदी और उसने उसे कोहनूर देदिया।

रणजीत सिंह बहुधा राज कार्यों में उसे अपनी भुजा पर बांधे रहते थे। अपनी मृत्यु के समय रणजीत सिंह ने उसे जगज्ञाथ धाम भेजवाने की इच्छा प्रकट की, उस समय यह १० लाख पौरुष का था। (The Punjab by Steinbach, 1846, P. 16) किन्तु अन्त में वह कहीं नहीं भेजा जा सका। $18\frac{3}{4}$ ई० में उनकी मृत्यु के पश्चात् यह रत्नागार में रख दिया गया। फिर रणजीत सिंह की विधवा महिले

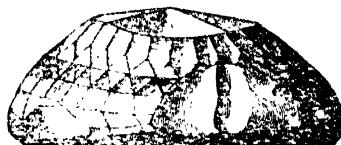
२० दाम तक चौदहवीं में ; २० से कम १० दाम तक पन्द्रहवीं में ; १० से कम ५ दाम तक सोलहवीं में । प्रत्येक मोती अपनी श्रेणी के गणनानुसार उतने ही धागों में पिरोया गया है ; जैसे सोलहवीं श्रेणी के मोती सोलह धागों में पिरोये गये हैं । हर लड़ी के धागों के सिरे पर खास शहंशाही मोहर होती है । इस कारण,

किन्दन उसको दिलीपसिंह की सुजा पर बांधने लगी । (विश्वकोश)

जब पंजाब पर १८४६ है० में ब्रिटिश-सरकार का अधिकार हुआ, और दिलीपसिंह को ४० हज़ार पौरुष वार्षिक पेन्शन देकर पंजाब के बाहर रहने की आज्ञा दी गई तथा सिक्खों की जारी ज़ब्त करके उनकी पेन्शनें नियत की गईं, उसी समय पंजाब के शासन प्रबन्ध के लिए एक छोड़ बनाया गया था । लार्ड डल्हौसी ने उसका प्रेसीडेंट लार्ड लारेन्स को बनाया । तभी यह हीरा लार्ड लारेन्स के पास आया । वे उसको एक टीन के बक्स में बन्द करके भूख गये । जब उनसे मांगा गया तब २६ मार्च १८४६ है० को इंग्लैण्ड भेजा गया और ३ जून १८४६ है० को वह वहाँ पहुँचा ।

१८४१ है० में हाइड-पार्क की प्रदर्शनी में वह प्रदर्शित किया गया । उस समय उसका वज़न १८६^{१६} कैरट था और उसका मूल्य १४ लाख पौरुष निर्धारित हुआ था । १८४२ है० में किन विकटोरिया की इच्छा से अधिक आब लाने के लिए इसके तराशने का काम मेसर्स गैरड्स को सौंपा गया । उन्होंने ऐम्स्टर्डम के बूर सेंजर नामक हीरा तराश से ३८ दिन तक इसे तराशवाया । इसमें उसके तीन दुकड़े हो गये । बड़े दुकड़े को गुलाब जैसा बनाने के लिए उसे फिर तराशा गया । (विश्वकोश) । इसमें ८००० पौरुष व्यय हुए । घटते घटते अब १०६^{१६} कैरट का रह गया है और उसकी आकृति इस प्रकार की

कोहनूर



कोहनूर

है । आज कल कोहनूर टावर आफ लारडन के स्टेट-ज्वेलरी रूम में, साम्राज्ञी मेरी के ताज में जड़ा हुआ, रखवा है ।

किन्तु ही ऐतिहासिकों के मत से वह हीरा (जो अब इंग्लैण्ड में है) बाबर वाला हीरा नहीं है, वरन् मीर जुमला वाला है, जिस पर कटने के निशान लोगों ने बराबर देखे हैं, और उनका उल्लेख अपने ग्रंथों में किया है । उनके अनुसार १६५६ है० में वह ६०० रत्ती या ७८०^{१६} कैरट का था । टैवरनियर ने १६६५ है० में इसे ३१६^{१६} रत्ती या २७६^{१६} फ्लोरैन्टाइन कैरट या २६८^{१६} इंगिलश कैरट का देखा था । किन्तु बाबर का हीरा ८ मिस्काल या ३२० रत्ती या १८६^{१६} कैरट का था । मिठा बाल के अनुसार टैवरनियर की रत्ती २६६ ट्राय ग्रेन के बराबर थी और बाबर की १८४२ ग्रेन की । मिठा बाल (Travels in India, translated by V. Ball, 1925, Vol II, P. 338-339) के अनुमानानुसार बाबर का हीरा उस समय शाहजहां के अधिकार में रहा होगा, जब कि टैवरनियर ने औरंगज़ेब के जवाहरात देखे थे । जब शाहजहां मर गया तब वह उसके अधिकार में आगया होगा ।

प्रत्येक मोती बदल जाने के गड्डवड़ से बच जाता है। इसके अतिरिक्त हर मोती में एक विवरण लगाकर भ्रम का मल साफ कर दिया गया है।

दैनिक और मासिक वेतन पर काम करने वालों के अतिरिक्त, दूसरे

नादिरशाह उसे दूसरे जवाहरात के साथ फ़ारस लेगया होगा। यह हीरा अब तक फ़ारस के बादशाह के पास है। यह तोल में भी बाबर के हीरे के बराबर अर्थात् १८६ कैरेट का है। इसका नाम 'दरियाय-नूर' है।

कोहनूर भी जब इंग्लैण्ड गया था तो १८६^१ कैरेट का था। बाल के मत से टैवरनियर के समय से १८१० ई० नक्क लगभग १८७ कैरेट (२६८^१—१८६^१) की ओर ४०० उसमें कमी हो गई है उसका कारण उसका विभिन्न शासकों के पास जाना तथा उनकी आवश्यकता के अनुमार उसका वराशा जाना है। यह कमी शाहमन्त्र, शाह शुजा या शाह ज़मां के समय में हुई है (Travels in India, Translated by Ball, Vol. II, P. 315)।

इनसाइट्लॉपीडिया ब्रिटेनिका (Encyclopaedia Britannica, 1929, Ed. 14, Vol. 13, P. 474] में लिखा है:— “कोहे-नूर—एक प्रसिद्ध हीरा, जिसके इतिहास का पता निश्चय पूर्वक चोद्हवी शताब्दी के आरम्भ से लगाया जा सकता है।” इससे यह स्पष्ट प्रकट है कि यह मीर जुमला से दो ढाई सौ वर्ष पूर्व अर्थात् मालवा के हिन्दू शासक के समय का है। इसी आद्वन के अन्तिम पैरे में १८ टांक ४ रत्ती (४२२^१ रत्ती) तक के हीरों का उल्लेख हुआ है। तोल के विचार से अकबर के हीरे ४२२^१ रत्ती तक के थे; किन्तु औरंगज़ेब का हीरा कटने के पहले केवल ६०० रत्ती का था। संभव है शाहजहाँ

ने अधिक शाव लाने के लिए किसी उत्तम कारीगर से अकबरी हीरे को ही कटवाया हो और टैवरनियर ने इसी को ६०० रत्ती का लिखा है। ‘विश्व कोश’ के अनुसार रणजीतसिंह का हीरा ही बाबर का हीरा है।

बाल ने “ऐनिल्स-इन-इण्डिया” के भापान्तर में कई स्थानों पर टैवरनियर की इस वात की सूचना शिकायत की है कि उन्होंने रत्ती को कैरेट और कैरेट को रत्ती लिख दिया है और उनकी तोल में भी सन्देह है। साथ ही शाहजहाँ को बन्दी गृह में यह हीरा कैसे मिला होगा? यह बात भी समझ में नहीं आती। इतना ही नहीं बाल ने उनकी भूलों को जगह जगह पर प्रकट किया है। जहाँ तक टैवरनियर का नाप जोख का सम्बन्ध है वह तो बाल के शब्दों में ही विश्वसनीय नहीं है। अब रही बाल के ऐतिहासिक ज्ञान की वात—इस सम्बन्ध में इतना ही कहना पर्याप्त है कि उन्होंने दोस्त मुहम्मद को शुजा का गाई बनलाया है (Travels in India, Appendix 2), जो कि बिल्कुल गलत है। वास्तव में मुहम्मद बारकज़र्द खानदान का था और शाह शुजा तुर्कनी बंश का (Oxford History of India by Vincent Smith, 1923, P. 675.)। ऐसी अवस्था में कोहनूर की ऐतिहासिक शृङ्खला तथा उसके परिमाण का ठीक निश्चय होना कठिन है।

जो कुछ भी हो इस विरोधाभासात्मक सामग्री की उपस्थिति में तथा प्रमाणों की व्यवस्थित शृङ्खला न मिलने की अवस्था में निश्चयपूर्वक नहीं कहा जा सकता कि शाह फ़ारस का हीरा ही बाबर का हीरा है और विक्रमादित्य का हीरा कोहनूर हीरा नहीं है।

कर्मचारियों को मोती बेधने का परिश्रम-पुगस्कार निम्नलिखित क्रमानुसार दिया जाता है : — जो प्रथम श्रेणी के मोती को बेध कर लड़ी के योग्य बनाता है १ चरन्^१ (१ रु०) पाता है ; दूसरी श्रेणी के मोती का बंधक अष्ट (१० रु०) ; तीसरी श्रेणी का दसा (१० रु०) ; चौथी श्रेणी का ३ दाम ; पांचवीं श्रेणी का सूकी^२ : छठी श्रेणी का १ दाम ; सातवीं श्रेणी का ४ दाम ; आठवीं श्रेणी का १ दाम ; नवीं श्रेणी का १४ दाम ; दसवीं श्रेणी का ५ दाम ; चारहवीं श्रेणी का १ दाम ; बारहवीं श्रेणी का १७ दाम ; तेरहवीं श्रेणी का १ दाम ; चौदहवीं श्रेणी का १६ दाम ; पन्दरहवीं श्रेणी का १५ दाम ; सोलहवीं श्रेणी का ११ दाम (११ मोती के दाने बंधने पर १ दाम) तथा कम ।

इन अनमोल गत्तों के मूल्य की अपूर्वता इतनी अधिक प्रसिद्ध है, कि उसके सम्बन्ध में कुछ लिखना व्यर्थ है । पर आज कल जो मणिमुक्ता मन्त्राद् के कोण में हैं, उनका व्योग इस प्रकार है : — लाल—११ टांक^३ २० रत्ती भर का, और होरा—५^४ टांक ४ रत्ती भर का ; हर एक का मूल्य एक लाख रुपए । पन्ना—१७^५ टांक ३ रत्ती भरका, मूल्य ५२००० रुपए । याकूत—४ टांक ७^६ रत्ती भर का, और मोती—५ टांक भर का ; हर एक का मूल्य ५०००० रुपए ।

आईन ४ ।

टकसाल ।

यतः टकसाल की समृद्धि कोप की पंजीवर्द्धक होती है और प्रत्येक कार्य उसी से शोभा प्राप्त करता है, अतः मैं उसका कुछ हाल लिखता हूँ और वाग्वाटिका को परिचय करता हूँ ।

१—इन सिक्कों का पूरा हाल आगे है । श्रबुल फ़ज़्ल ने आगे दिया है, उससे प्रकट

२—संस्कृत भाषा में इसे टक कहते होता है कि एक दाम का वज्ञन ४ टांक या १ तोला १ माशा ७ रत्ती था । इस हिमाव से एक टांक, तौल में ४ माशा १५ रत्ती भरका होता है ।

नागरिकों और ग्रामीणों का कार्य द्रव्य से चलता है और हर एक अपनी इच्छानुसार उसका उपयोग करता है। विरक्त उसको अपने जीवन-स्थिरता की सामग्री बनाता है, और साँसारिक अपने अभीष्ट सिद्धि का अंतिम पड़ाव जानता है। निदान, सबका प्रयोजन उससे सफल होता है। बुद्धिमान उसको लौकिक और पारलौकिक आशाओं की पूर्ति का प्रधान स्रोत जानता है। मनुष्य जाति के लिए तो वह परमावश्यक है; क्योंकि जीवन-अस्तित्व के आधार, भोजन और वस्त्र का वह विशेष साधन है। उपरोक्त दोनों वस्तुएँ बहुत कष्ट और परिश्रम से प्राप्त होती हैं, जैसे बोना, सींचना, काटना, साफ करना, गूंधना, पकाना, कातना, ताना तनना और बुनना इत्यादि। इन कार्यों के साधन, बिना अनेक सहायकों के पूरे नहीं हो सकते; क्योंकि उनके करने के लिए एक मनुष्य का बल पर्याप्त नहीं होता, और नित्यप्रति एक आदमी के लिए उक्त कार्यों का करना कठिन ही नहीं, वरन् असम्भव है। मनुष्य के लिए एक घर का होना भी आवश्यक है, जिसमें कि वह कुछ दिन का सामान रख सके। फिर चाहे वह तम्बू हो या खोह, उसे घर कहते हैं। मनुष्य की उत्पत्ति और उसके जीवन की स्थिरता निम्न लिखित पांच पदार्थों पर निर्भर है,—पिता, माता, पुत्र, सेवक और आहार; इनमें से अन्तिम पदार्थ सबका कार्य-साधक है। इसके अतिरिक्त अधिकतर सामान टिकाऊ नहीं होता और दृट फूट जाता है; अतएव प्रत्येक दशा में द्रव्य की आवश्यकता होती है। द्रव्य, पदार्थ की प्रौढ़ता और कठोर गदाई के कारण, बहुत समय तक दृढ़ रहता है, और थोड़े से भी बहुत काम निकलता है। यात्राओं में भी काम आता है; क्योंकि थोड़े दिनों का भी भोजन ले जाना कठिन होता है, फिर महीनों और सालों के लिए क्या कहा जाय !

ईश्वर की कृपा सहायक हो गई, और यह बहुमूल्य मुक्ता (सुवर्ण) अस्तित्व-तट पर आगया तथा बिना परिश्रम किये जीवन-सामग्री तैयार हो गई। इसके सबब से मनुष्य के साहस का मस्तक अयोग्यता की धूल से नहीं सौंदता और ईश्वरोपासना भली भांति बन पड़ती है। इसके गुण वर्णन नहीं हो सकते; यह कोमल शरीर, स्वादिष्ट और सुगन्धित होता है। इसके मिश्रित अवयव^१ प्रायः तौल में बराबर होते हैं। चारों तत्वों^२ में से प्रत्येक के लक्षण इसकी अवस्था

१—मध्य युग के रासायनिकों का मन्त्रव्य है कि सोने में, गन्धक और पारा समझाग में मिले होते हैं। गन्धक से ही सोने में रंग आता है। देखिये आईन १३।

२—मुसल्मान तत्वज्ञ केवल चार तत्व मानते हैं। आकाश की गणना वे तत्वों में नहीं करते।

के मुखड़े से प्रकट होते हैं। रूप से अग्नि, शुद्धता से वायु, कोमलता से जल और गुरुत्व से पृथ्वी का ज्ञान होता है; और इसी लिए इसमें जीवन-दायक अनेक चमत्कार होते हैं। अन्य धातुओं के प्रतिकूल, चारों तर्वों में से कोई भी तत्व, उसे ज्ञाति नहीं पहुँचा सकता। पावक से वह जलता नहीं, वायु उसमें असर नहीं करती, पानी युगों तक उसका रूप नहीं बदलता और मिट्टी उसे खाती नहीं है। इसी कारण तबज्ञान सम्बन्धी प्राचीन ग्रन्थों में बुद्धि को—जिस से हर कार्य की युक्ति कार्य-रूप में परिणित होती है—नामूसे-अकबर कहा है; और सुवर्ण को—जिस पर जीवन-सामग्री निर्भर है—नामूसे-असगर बतलाया है। गुण वाचक दो शब्दों में, सोता न्याय-क्षक एवं लोक-व्यवस्थापक है। बस्तुतः बस्तुओं की सुव्यवस्था उसी से होती है और न्याय की नीव भी उसी पर आधारित है। अद्वैत ईश्वर ने उसकी सुश्रूपा के लिए चांदी और ताँबे को प्रचलित किया, और इनको मनुष्य के सम्पन्न होने का सहायक साधन बनाया है। इन्हीं दूरदर्शी विचारों से, न्यायी शासकों और जाप्रतभाग महीपालों ने इन नगदों के प्रचार में उत्साह दिखलाया है, और इस कार्य की उन्नति के लिए टकसाले स्थापित की है। इस कार्यालय की सफलता इस बात पर निर्भर है कि सन्यनिष्ठ, परिश्रमी और बुद्धिमान कर्मचारी नियुक्त हों, और विश्वधाम का स्तम्भ उन्हीं के स्थिर विचारों और निरीक्षण पर निर्मित हो।

आईन ५

टकसाल के सहायक ।

पहला दारोगा—एक बुद्धिमान सचेत व्यक्ति होता है, जो अपने विचार-गांभीर्य और साहस विशालता से अपने साथियों का कष्टकर कार्य-भार शीघ्र संचालन के कंधे पर रखता है, हर एक को उसके काम काज में लगाये रखता है और अपने परिश्रम तथा सत्यता द्वारा कार्य को पूरा करता है।

१—बड़ा देव दूत। २—छोटा देव दूत।
‘हरीरी’ अरबी भाषा का प्रामाणिक-अंथ है। उसमें लिखा है, ‘यदि यह बात धर्म के विरुद्ध न होती, तो मैं सोने को शीश नवाता और केवल ‘ज़र’ न कह कर ‘ज़र-

अले-उससलाम’ कहता ।”

संस्कृत में सोने को हिरण्य और चाँदी को रजत कहते हैं। सर्वे गुणाः कांचन-माश्रयन्ति; अर्थात् समस्त गुण कंचन के आश्रित हैं। (भर्तृहरि)

दूसरा सैरफी—इस महत्वपूर्ण विभाग की सफलता इसके अनुभव पर निर्भर है, और मुद्राओं की खराई के अनुसार उनकी श्रेणियां निश्चय करने का भार उसके कर्तव्यपरायण सत्याचारी हाथों पर अवलम्बित है। सुसमय के कारण, इस राज्य में बहुत से कार्य कुशल सर्वाक एकत्र हो गये हैं और सम्राट् के ध्यान देने से सोना और चांदी खराई के सर्वोच्च पद पर पहुंच गये हैं। अजम (ईरान) में सब से घरे सोने को दहदही कहते हैं, परन्तु वहां के लोग सोने की खराई दस अंशों (अंशों) से अधिक नहीं जानते। हिन्दी भाषा में घरे सोने को बारह बानी बहते हैं, क्योंकि यहाँ के लोग खराई बारह प्रकार की मानते हैं।

१—**अःयार शब्द अःरवी भाषा का है।** इसका अर्थ सोने और चांदी की चाशनी (बानगी) है। चांदी और सोने के तौलने और कसीटी पर कसने को भी अःयार कहते हैं। इस स्थल पर यह शब्द खराई के अंशों के अर्थ में प्रयुक्त हुआ है, जो १० अंश मानी गई है।

अकबर के समय में खराई के लिए बान शब्द प्रचलित था। सब से घरे सोने की १२ बान का सोना कहते थे। उससे कम दर्जे का ११, १० और ६ आदि अंशों का होता था।

आज कल इसके लिए कई शब्द व्यवहृत होते हैं। जैसे—कैरट (Carat), टच (touch) और बटा आदि। सब से खरा सोना २४ कैरट का, १०० टच का, पक्का सोना, पांसा, ध्वालिस, शुड़, बीस बिस्वा, सोलह आने पक्का, बिना छीज बटा आदि आदि नामों से पुकारा जाता है। परन्तु जो खराई में जितना कम होता है वह उसी के अनुसार उतने ही कि. कैरट, टच या बटे का सोना कहलाता है।

कैरट के सम्बन्ध में “इनसाइक्लो-पीडिया ब्रैटेनिका का” (Encyclopaedia Britannica, 1929, Ed. 14 Vol. 4 P. 827) में लिखा है—“कैरट एक छोटा सा बाट है (जो पहले बीज के रूप में था) जो हीरों

और मूल्यवान पत्थरों के तौलने तथा सोने की शुद्धता के निश्चय करने के लिए परखने में काम आता है..... इस समय भिज्ञ भिज्ञ स्थानों में कैरट की तौल में अन्तर है। १८७७ ई० में लरडन, पैरिस और ऐम्स्टर्डम के जौहरियों के सिङ्गडीकेट ने कैरट का वज्ञन २०५ मिलीग्राम (३.१६३ द्राय ग्रेन) निश्चित किया था। दक्षिणी अफ्रीका का कैरट गार्डनर विलियम्स के अनुसार ३.१७६ ग्रेन का होता है। सोने की शुद्धता निश्चित २४ कैरट के अनुपात में जांची जाती है। इस प्रकार निकृष्ट धातु के २ भाग मिलने पर २२ कैरट का सोना बनता है।” जिस सोने में चाँदी और तांबा मिला होता है, कैरट का प्रयोग प्रायः उसी के लिए होता है। कैरट की तौल साधारणतः ४ ग्रेन की मानी जाती है। कदाचित् कैरट अःरवी के कीरात शब्द से निकला हो। कीरात की तौल आधा दांग या ४ जो होती है, (शयासुल्लुगात)।

टच का अर्थ परख और कमी है। जिस सोने में चाँदी और तांबा दोनों धातुएँ मिली रहती हैं, अधिकतर उसके लिए टच शब्द प्रयोग होता है। जन साधारण हर प्रकार के सोने के लिए टच और कैरट प्रयोग करते हैं।

बटे का प्रयोग आम तौर से होता है, जैसे कहते हैं—यह पक्का सोना नहीं है, यह एक आने वटे या ६ रत्ती बटे का है।

लोग पहले, पुराने हुन के सोने को—जो एक सिक्का है और दक्षिण में प्रचलित है—सब से बढ़िया जानते थे और उसका व्यवापन १० अंश मानते थे; परन्तु सम्राट् की जांच में उसकी व्यर्गई केवल $\frac{1}{2}$ अंश स्थिर की गई है। अलाउद्दीन के गोल छोटे दीनार के सोने की व्यर्गई, लोग १२ अंश मानते थे; पर आज के दिन वह $\frac{1}{2}$ अंश की सिद्ध हुई है।

इस कला के निपुण व्यक्ति आज कल के सोने से इतिहास तैयार करते हैं और लोगों को उसकी कथाएँ सुनाते हैं तथा इसको रसायन का सोना ख्याल करते हैं। वे कहते हैं कि खान का सोना इस दर्जे को नहीं पहुंचता है। परन्तु सम्राट् के ध्यान देने में वह उस दर्जे पर पहुंच गया और अनुभवी व्यक्ति विस्मित हो गये। वास्तव में अब उसकी व्यर्गई का दर्जा न इसमें घटेगा और न बढ़ेगा। मन्त्यशील, वाक्‌पटु प्रवं तथ्यवादी पृथ्वी-पर्यटक इस श्रेणी के सोने का पता कहीं नहीं बतलाते हैं। परन्तु जब उस गलाते हैं, तो सूक्ष्म कण उसमें अलग हो जाते और गम्ब में सिल जाते हैं। मूर्ख उस सोने को मल ख्याल करते हैं, परन्तु गुणी उस गम्ब से निकाल लेते हैं। यद्यपि आधात वर्द्धनीय व्यनिज-स्वर्ग, गलाते में गल जाता और राम हो जाता है तथापि विशेष क्रिया द्वारा वह (सोना) अपनी मृत अवस्था को लौट आता है किन्तु उसमें कुछ कमी हो जाती है। सम्राट् के दृष्टि-प्रकाश से उस कमी की असलियत प्रकट होगई और लक्षितों की धूर्तता पकड़ ली गई।

१—कौटिल्य ने सोने के आठ भेद लिखे हैं—१ जामूनद, जांकि जमू नदी में निकलता है; भट्ट स्वामी के मन से यह गुलाबी सेव के रंग का होता है। २ शातकुम्ब, यह शात कुम्ब पर्वत से प्राप्त होता है; इसका रंग कमल-पुष्प-दल के समान होता है। ३ हाटक, जो कि हाटक नाम की प्रसिद्ध ग्वानों से निकाला जाता है। ४ देण्य, जो कि देण्य पर्वत की उपज है; इसका रंग कनक घम्पा के समान होता है। ५ श्वशुक्षिज, जो कि श्वशुक्षिज से निकाला जाता है; इसका रंग लाल संखिया के समान होता है। ६ जातरूप। ७

रमविद्ध। ८ आकरोद्गगत, जो ग्वान में निकलता है।

जो सोना कमल के फूल की पंखुड़ियों के रंग का, मृदु चमकीला और ठनठनाने वाला हो, प्रेष्ठ होता है। साथही रंग में एक समान हो, कमीटी पर कमा जाकर एक जैसी लकीर दे। ग्वोग्वला तथा पोला न हो। पक्का, चिकना तथा शुद्ध हो। पहनने पर शोभा बढ़ावे। सदा ही नथा मालूम पड़े, तथा चमकता रहे। आंखों तथा हृदय को प्रिय मालूम पड़े। लाल पीले रंग का सोना मध्यम कोटि का, और केवल लाल रंग का निकृष्ट होता है।

आईन ६।

बनवारी।

बनवारी शब्द बानवारी का संदिग्ध रूप है। यथापि इस देश में बुद्धिमान मरीक अपने अनुभव द्वारा रंग और मफाई में धातु के घरंपन का दर्जा जान लेते हैं तथापि दृमरो के प्रबोध के लिए यह प्रशंसनीय व्यवस्था जारी की गई है।^१

ताँच और इसी प्रकार की दृसरी धातुओं के कुछ कलम बनाये हैं, जिनमें से हर एक के सिर पर थोड़ा सा सोना लगा दिया है, और हर कलम पर उसके सोने के घरंपन का दर्जा लिख दिया है। जब नए आये हुये सोने की जाँच करते हैं, तो उम सोने में और कलमों से कसौटी^२ पर्थर पर कई रंगाएँ खीचते हैं। जिस कलम की लकीर से नए सोने की रंगा का रंग रूप मिल जाता है वह उसी गर्ड का सोना समझा जाता है। परन्तु यह आवश्यक है कि रंगाएँ एक ही प्रकार की खीची जाय और खीचने में एक ही माल प्रयोग किया जाय। उसमें छल छिद्र की धूल का संमर्ग न हो।

इस नियम का मंचालन तरह तरह के बानों का सोना बनाने पर निर्भर है। इसकी क्रिया इस प्रकार है—एक माशा रावलिम चांदी और उनना ही

१—कौटिल्य ने सुवर्णाध्यक्ष के कर्तव्यों में लिखा है—कमोटी पर कमने पर जब साने का रंग हल्दी की तरह हो तो उसको सुवर्ण कहते हैं। जब इस सुवर्ण (१६ मापक बाला) के एक में सोलह काकणी तक के परिमाण में एक में सोलह काकणी तक क्रमशः लांवा मिलाते हैं, तो सोलह प्रकार का सोना तैयार हो जाता है। कसौटी पर पहले उत्तम सोने की रेखा बनाकर फिर दूसरे सोने की रेखा खीची जाय। कमोटी पर जा रंगा खीची जाय वह नाखून या अंगूठे से मिट जानी चाहिये। यदि उसके मिटाने के लिए गेहूं प्रयुक्त करना पड़े तो बेद्धमानी का अनुमान करना चाहिये। गो मूत्र में जाति हिंगुलुक

(हंगुर) या पुष्प कासीम डाल कर सोना डाला जाय और उसको अंगूठे से रगड़ा जाय तो सोना सफेद हो जाता है।

२—केसर की तरह, चिकनी मृदु और चमकीली कमोटी श्रेष्ठ होती है। कलिग देश की मृंगे के रंग की भी कमोटी श्रेष्ठ मानी जाता है। एक समान लाल रंग की कमोटी परीदने और बेचने के ही काम में आती है। हाथी के रंग की या हरे रंग की कसौटी बेचने के और स्थिर, कठोर भिज्ज दर्गा एवं काले रंग की (कमोटी) खरीद करने में लाभदायक होती है। इनमें भी सफेद, चिकनी, बरावर रंग बाली, मृदु तथा चमकीली श्रेष्ठ मानी जाती है। (कौटलीय अर्थशास्त्र, अधिकरण २)।

खालिस तांबा इकट्ठा गला कर थकिया बनते हैं, और फिर उस मिश्रण को ६ माशे खालिस मोने के साथ—जो $10\frac{1}{2}$ वान खग हो—गलाते हैं, खोटे मोने का दुकड़ा बन जाता है। इस दुकड़े में से एक माशा साना लेकर उसके सोलह भाग करते हैं, प्रत्येक भाग आधी रक्ती का होता है। जब $7\frac{1}{2}$ रक्ती खालिस मोना ($10\frac{1}{2}$ वान का) इस मिश्रण के एक भाग ($\frac{1}{2}$ रक्ती) के साथ मिलाते हैं, तो $10\frac{1}{2}$ वान का सोना तैयार होता है। यदि $7\frac{1}{2}$ रक्ती खालिस मोने को मिश्रण के दो भागों के साथ मिलावे तो १० वान का सोना बनेगा। अगर $6\frac{1}{2}$ रक्ती खालिस मोने को मिश्रण के तीन भागों के साथ गलावे तो $6\frac{1}{2}$ वान का सोना तैयार होगा। यदि ६ रक्ती विशुद्ध मोने को खोटे मोने के चार भागों से मिलावे, $6\frac{1}{2}$ वान का सोना बनेगा। अगर $5\frac{1}{2}$ रक्ती खालिस मोन को खोटे मोने के पाच भागों के साथ मिश्रित करे तो $6\frac{1}{2}$ वान का सोना तैयार होगा। जब ५ रक्ती शुद्ध मोने को उसके छँ भागों के साथ मिला देते हैं तो ६ वान का सोना तैयार होता है। यदि $4\frac{1}{2}$ रक्ती खालिस मोना खोटे मोने के सात हिस्सों के साथ मिलावे, तो $5\frac{1}{2}$ वान का सोना बनेगा। अगर ५ रक्ती शुद्ध गुवर्द्द को उसके आठ भागों के साथ गलावे हो तो $5\frac{1}{2}$ वान का सोना तैयार होता है। जब $3\frac{1}{2}$ रक्ती खालिस मोने को उसके नौ हिस्सों के साथ मिलाते हैं तो $5\frac{1}{2}$ वान का सोना बनता है। जब ३ रक्ती खालिस गोना उसके दृम भागों के साथ गलावे, तो ८ वान का सोना बनता है। जब $2\frac{1}{2}$ रक्ती खालिस सोना, मिलावटी दुकड़े के म्यारह भागों के साथ गलावा जाता है तो $7\frac{1}{2}$ वान का म्यारह हाथ लगता है। यदि २ रक्ती खालिस सोना, उसके बारह भागों के साथ गलावे तो $8\frac{1}{2}$ वान का सोना तैयार होता है। यदि $1\frac{1}{2}$ रक्ती शुद्ध मोने को मिश्रित के तरह भागों से मिलावे तो $7\frac{1}{2}$ वान का सोना बनेगा। जब १ रक्ती खालिस मोने को उसके चौदह भागों के साथ गलावे तो ७ वान का सोना रह जायगा। जब आधी रक्ती खालिस मोने को उसके पन्द्रह भागों से मिलाते हैं, तो $6\frac{1}{2}$ वान का सोना तैयार होता है। इस क्रिया का मार्गश यह है, कि खोटे मोने की प्रति आधी रक्ती की मिलावट असली सोने के स्वरूपन में चौथाई वान की कमी पेदा कर देती है। उस खोटे

सोने के दुकड़े का मान, जो दूसरे प्रयोग ढाग तैयार हुआ है, ६^१ वान होता है।

जब चाहते हैं कि ६^१ वान से भी कम मान का सोना तैयार हो तो पहले मिश्रण की २ रक्ती को जो तांदा और चांदी मिला कर तैयार किया गया था—दूसरे मिश्रण की ७^२ रक्ती के साथ (जो सोने, चांदी और तांबे के मिश्रण से बना है) मिलादें तो ६^३ वान का सोना तैयार होगा। जब पहले मिश्रण की १ रक्ती दूसरे मिश्रण की ७ रक्तियों से मिलावें तो ६ वान का सोना रह जायगा। यदि उसका मान इससे भी कम करना चाहे, तो मिश्रणों में आधी आधी रक्ती बढ़ाने जाय। बानवारी में ६ वान तक की मात्र मानते हैं। इस में कम बानों के सोने का हिसाब किताब नहीं होता। यह सब कार्य साहबे—अयार (प्रधान—पारग्यी) की देख रेख में होता है, और शोभा बढ़ाता है^४।

तीसरा, अमीन^५—उसके निम्नार्थी और निलंभी होने से शत्रु मित्र निर्भीक रहते हैं। मन भेद सम्बन्धी वार्तालाप के ममय वह दारोगा और दूसरे लोगों का सहायक होता है। वह सत्य सत्य कहता है और भगड़ा शांत कर देता है।

चौथा, मुशरिफ—जो हिसाब लिखने, मामला समझने और ईमानदारी में आय व्यय की शाखा को दृढ़ रखता है, और बुद्धि प्रिय गंजनामचा भरता है।

पांचवां, सौदागर—सोना चांदी और तांदा लाकर लेन देन करता है और अपना नफा लेता है। और इस प्रकार कारखाने की शोभा बढ़ाता है। कर चुकाकर कोप की वृद्धि में प्रयत्न करता है। इस मुद्राय की बढ़ती और व्यापार की उन्नति, न्याय की व्यापकता और कर्मचारियों की तृप्तिहीनता से होती है।

छठा, गंजूर^६—लाभ के संपर्य की चौकसी करता और लेन देन में सत्यता के साथ व्यवहार करता है।

१—कोटिल्य ने भी इस विषय में “बनिज पदार्थों के व्यवसाय संचालन” तथा “मुवरण्णध्यक्ष के कार्य” में प्रकाश डाला है।

२—अमीन का अर्थ अमानतदार अर्थात् वह व्यक्ति जिसके पास किसी अवधि के लिए धरोहर के रूप में कोई वस्तु रक्खी

जाय। यहां पर आज कल के उस अदालती अमीन से आशय नहीं है, जो मौके की तहकीकात करता है, जमीन नापता, बटवारा करता या डिगरी आदि का अमल-दरामद कराता है।

३—खजांची।

छठे और प्रथमोक्त चार अधिकारियों के बेतनों में एक दृग्मर के बेतन में अन्तर रहता है। इन में सब में छोटा अहदी^१ पद पाकर मंमार में सफल होता है।

सातवां, तराजूकश^२—सिक्को को तौलना है। यदि सोने की १०० जलाली मोहरे जोखता है तो $\frac{3}{4}$ दाम मजदूरी लेता है, चांदी के १००० रुपया तौलने में $\frac{1}{2}$ दाम; और तांबे के १००० दाम तौलने में एक दाम का $\frac{1}{2}$ पाता है। सिक्को के कमोंबेश होने पर तुलाई में भी उभी हिमाव में कमी बेशी हो जाती है।

आठवां, गुदाजगर स्खाम^३—वह मिट्टी के तरबे पर छोड़ी बड़ी नालियों बनाता और उन पर तेल चुपड़ डेता है। फिर सोना चांदा गलाकर, उन नालियों में डाल देता है, भलास बन जाती है। पर तांबे के लिए तेल में चिकना करने के स्थान में केवल गम्ब छिड़कना ही पर्याप्त होता है। पूर्वांक गौल (१०० मोहर जलाली) का सोना गलाने की मजदूरी २ दाम $\frac{1}{2}$ जीतल, पूर्वांक तौल की चांदी गलाने पर ५ दाम $\frac{1}{2}$ जीतल, और उपर्युक्त तौल का तांबा गलान पर ४ दाम $\frac{1}{2}$ जीतल पाता है।

नवां, बर्क कग—वह मिलावटी सोने के बर्क बनाता है, जिनमें ए हर एक की तौल छें या सात माश और लंबाई चौड़ाई छें अंगुल होता है। उनको वह पारम्परी के पास लाता है। वह उनको एक मांचे में, जो तांबे का बना होता है, डालकर जांचता है। जिनको वह ठीक पाना है, उन पर अदल^४ का छाप लगा देता है, जिसमें उनमें परिवर्तन न होने पावे और यह जान लिया जाय कि इन पर कारंवाई हो चुका है। पूर्वांक सोने का तौल के बर्क बनाने पर उसका ४२ $\frac{1}{2}$ दाम मजदूरी मिलती है।

१—अहदी अरबी भाषा के ‘अहद’ के पदों पर, दरबार के चिन्हकारों आर शब्द में—जिसका अर्थ ‘एक’ होता है—बना है। अहदी से आशय उस व्यक्ति का है, जो अकेला ही कठिनतर कार्यों को कर सके। अकबर के समय में ये मिपाही का काम करते थे और बड़ी आवश्यकता के समय इन से काम लिया जाता था, बाकी दिन ये बैठे बैठे खाते थे। पड़े पड़े खाने के कारण ही ‘अहदी’ शब्द आलमियों, निठलुओं और अकर्मण्यों के लिये प्रयुक्त होने लगा है। ये राज दरबार में मुहरिरों

कारम्बानों में भी रहते थे। मालगुजारी न देने वाले व्यक्तियों के दरबाजे पर ये डट जाते थे और उनमें बिना बसूल किये नहीं उठते थे। द्वितीय ग्रन्थ के चौथे आईन में इनके कर्तव्यादि का मविम्तर उल्लेख है।

२—डंडीदार।

३—कची धानु गलाने वाला।

४—न्याय की छाप, ठीक होने का ठप्पा।

आईन ७।

खोटे सोने को सफ़्क करने की रीति^१।

जब वर्को पर अदूल की छाप हो चुकती है, तों सोने का मालिक, पारखी की कायेपटुता से उनकी खोटाई इस प्रकार दूर करता है :—वह १०० जलाली मोहरों की तौल के सोने के लिए ४ मंर शोरा नमक और ४ संर कच्ची ईटों का चूग प्रयोग करता है। पहले वह वर्को को शुद्ध जल में धोता है, फिर उनको

१—कौटिल्य ने सोने को शुद्ध करने तथा उसको रंगीन बनाने की कई रीतियाँ लिखी हैं। जैसे, खोटा सोना सफेद रंग का होता है। इसमें चोगुना जस्त मिलाया जाय और पत्र के आकार में पीटकर तपाया जाय। लाल पड़ने तथा पिवलने पर इसको तेल तथा गोमूत्र में डाल दिया जाय।

जो सोना खान से निकला हो, जस्त मिलाकर उसके पत्र पाटे जाय, और उनको खरल में पीटा जाय। फिर उनको तपाया तथा पिवलाया जाय। अन्त में उस गलिन पदार्थ को केला तथा बज्रकन्द में डाल दिया जाय।

जो सोना तपाने के बाद अन्दर बाहर में केसरिया रंग का या कारण्ड (हंस की जानि का एक पक्षी) के रंग का हो वह उत्तम है, और जो काला या नीला पड़ जाय उसे मिलावटी समझना चाहिये।

चमकीला तथा तपनीय सोना तपनीय कहलाता है। इसमें जस्त और सेंधा नमक मिलाकर बिनवां कण्ठों से तपाया जाय। इस किया से इसका रंग नीला, लाल, पीला, सफेद, हरा, तोते तथा कवृतर के रंग का हो जाना है। सोने में रंग देने के लिये मारपंची सफेद चमकीले पीले रंग का तीक्ष्ण (संभवतः हीराकसीस)

नामक मसाला प्रयोग किया जाय।

शुद्ध या खोटी चाटी तूतिया, जस्त, हड्डी, (शुद्ध मृत्तिका) आदि में क्रमशः चार चार बार, गोमय में तीन बार, और फिर १७ बार तूतिया तथा नमक में मिला कर तपाया जाय। इस मिश्रण को एक काकणी (घुंघची, पण या माशे का चौथाई भाग) से दो माशे तक यदि सुवर्ण में डाला जाय तो सुवर्ण का रंग सफेद हो जाता है, और श्वेत तार कहलाता है। सफेद रंग के सोने के ३० भाग यदि तपनीय सोने के ३ भागों के साथ मिलाकर तपाया जाय तो सोना लाल रंग का, और लाल सोना पीले रंग का हो जाता है। तपनीय सोने को गरम कर यदि उस में रंग के तीन भाग दिये जाय तो उसका रंग लाल पीला हो जायगा। तपनीय सोने का एक भाग अगर सफेद के दो भागों से मिलाया जाय तो वह मूँग के रंग का बनेगा। यदि वह काले लोहे के आधे भाग के साथ मिलाया जाय तो उसका रंग काला पड़ जायगा। यदि उपर्युक्त तपनीय योग में पारा मिलाने के बाद दो बार तपाया जाय तो उसका रंग तोते के पंख की तरह हरा हो जाता है। भिज रंग के सोने को प्रयोग में लाने के पहले उसको कसोटी पर कस लेना चाहिये।

उसी मसाले में (शोग नमक और ईंटों के चूरे के ममाने में) सौद देता है। इसके बाद वर्को को एक दृसरे पर रखकर, बिनवाँ कड़ो में जिनको हिन्दी भाषा में उपला कहते हैं और जो जंगली गाय का सूखा गोबर है—ढांक देता है। फिर आग जलाता और धीरे धीरे जलने दता है। उपले गम्ब हो जाते हैं। जब आग बुझ जाती है तो उसके इधर उधर की गम्ब उठा कर गम्ब छोड़ते हैं। फारमी भाषा में उसको खाके खलास और हिन्दी में सलोनी कहते हैं। इस गम्ब से चाँदी निकाल लेते हैं, जिसके निकालने की क्रिया अलग लिखी जायगी। नीचे की राख वर्को सहित ज्यो की न्यो रहने देते हैं, और तो बार फिर आग जलाते हैं तथा पहली क्रिया का उपयोग करते हैं। जब तीन आंचे दे चुकते हैं, तो उसको सिताई^१ कहते हैं। फिर माफ पानी से धो डालते हैं, और वही मसाला लगा कर पुनः तीन बार आंचे देते हैं तथा राख अलग कर लेते हैं। इसी प्रकार छँ बार मसाला मिलाते, अदृग्दृष्टि आंचे देते और फिर धोते हैं। पारखी उनमें से एक तोड़ता है, यदि नरम और मुलायम आवाज आनी है तो वह उसके पृण्ठतया शुद्ध होने का लक्षण मानता है। अगर आवाज गम्बत होती है, तो मसाला मिलाकर तीन आंचे और देते हैं। पुनः प्रत्येक पत्र में एक एक माशा काट कर एक पृथक पत्र बनाते हैं और उसे कसाई पत्थर पर कसते हैं। यदि वह खालिस नहीं हुआ होता, तो एक दो बार फिर तपाते हैं। बहुधा तीन चार आंचों से उद्देश्य मिलता हो जाता है।

इस तरह से भी परीका करते हैं। दो तोला खालिस मोना लेते हैं और दो तोला तपाया हुआ मोना। दोनों मोनों के बराबर तोल के बीम लीम पत्र बनाते हैं। फिर मसाला सौद का आंच देते हैं। तपश्चान उनको धोकर तौलते हैं। यदि दोनों प्रकार के चर्के तोल में बगवर होते हैं तो यह उनके खालिस होने का लक्षण होता है।

दसवां, शुदाजगर पुस्ता^२—वह खालिस मोने के बर्कों को गलाता है और पहलो गीति से सलाम्बे बनाता है। १०० मोने की मोहरों में उसकी मजदूरी ३ दाम होती है।

ग्यारहवां, ज़र्बि^३—वह अपनी दृष्टि के बल से सोने चाँदी और तांबे की सलाखों से सिकों के अनुस्पष्ट गोल टिकियां काटता है। सोने की १००

१—तीन बार तपाई या ताई हुई धातु। ३—टिकिया बनाने वाला।

२—पक्की धातु गलाने वाला।

मोहरें की टिकियां तैयार करने पर वह २१ दाम और $\frac{1}{2}$ जीतल मज़दूरी पाता है। यदि चांदी की सलाखों से १००० रुपए की टिकियां बनाता है, तो ५३ दाम $\frac{3}{2}$ जीतल मज़दूरी लेता है। यदि उतनी ही चांदी से चबन्नियों की टिकियां तैयार करता है तो उसकी मज़दूरी में २८ दाम और बढ़ जाते हैं। १००० तांबे के दाम बनाने में २० दाम मज़दूरी लेता है। उतने ही वज़न के तांबे से आधे दाम और चौथाई दाम की टिकियां काटने में २५ दाम पाता है; अष्टांश दाम बनाने में, जिसको दमड़ी कहते हैं, ६६ दाम लेता है।

इगन और तूरगन में ज़र्गव, बिना सांच की निहाई के सिक्कों की नाप भर टिकियां नहीं काट सकते, हिन्दुस्तान के गुणी बिना उमके इस उत्तमता में कार्य करते हैं कि बाल भर फर्क नहीं पड़ता; और यह बड़े आश्र्य की बात है।

बारहवां, मोहरकन वह मिक्के के नक्शों को फौलाद और उसी प्रकार की दृग्गणी धानुओं पर छोटता है। उमके आकाश रूपए और अशराही आदि पर बन जाते हैं। आज कल इस काम पर मौलाना अली अहमद देहलवी^१ (दिल्ली निवासी) है। किसी दंश में उनका भानी नहीं बनलाया जाता। वह फौलाद पर नगह तरह की ऐसी मुन्दर लिपियां लिखते हैं, जो प्रसिद्ध मूलंगवाचार्यों के कलाओं की बराबरी करती हैं। वह यूज़बाशी^२ के पद पर है। इनके दो प्याहे टकमाल में रहते हैं, जिन में से हर एक का वेतन ६०० दाम है।

तेरहवां, सिक्कची-टिकियों को दो ठापों के बीच में रखता है। हथौड़े के बल से उनमें दोनों तरफ नक्शा हो जाते हैं। उमकी मज़दूरी १०० सोने की मोहरें के ठापा करने में १ दाम $\frac{2}{3}$ जीतल होती है, चांदी के १००० रुपयों के मिक्कों के नक्श करने में ५ दाम $\frac{1}{2}$ जीतल, और १००० रुपए की रंजगारी बनाने में १ दाम ३ जीतल और बट जाते हैं। तांबे के १००० दाम बनाने में उमकी मज़दूरी ३ दाम होती है; २००० आधे दाम और ४००० चौथाई दाम तैयार करने में ३ दाम $\frac{1}{2}$ जीतल, और ८००० अष्टांश दाम बनाने में १०२ दाम। मिक्कची अपनी मज़दूरी का छठा भाग बनहा को देता है, क्योंकि उमके लिये पृथक् मज़दूरी नियन नहीं होती।

१—इसी ग्रंथ का २० वो आईन स्वाम अहदी इस फौजी पद पर पहुँचते देखिये।

२—सुलिखित वाक्य।

३—सौ आदमियों का सरदार। स्वाम

श्रे। यूज़बाशी को ५०० से ७०० रुप

तक मासिक वेतन मिलता था। इस का वर्णन द्वितीय ग्रंथ के तीसरे आईन में है।

बौद्धवां, सब्बाक—माफ की हुई चांदी की टिकियां बनाता है और १००० रुपए भर के लिए ५४ दाम लेता है।

चांदी की सफाई—उसमें सीमा, जम्न और तांच का मेल होता है। इगन और तूरन में चांदी की मव में ज्यादा खगड़ी को दहदही कहते हैं और हिन्दुस्तानी सर्गफ उसे बीस्तबिस्वा (बीस विस्वा) कहते हैं। मिलावट के अनुसार उसका दर्जा घट जाता है। पांच में अधिक कम दर्जे की चांदी नहीं बनाई जाती है। दस दर्जे में कम वाली चांदी पर कोई ध्यान नहीं देता। अनुभवी परमिये मिलावटी चीज के रग में उसके न्यूनाधिक अश को जान लेते हैं। रेती में रगड़ कर या छेद करके, उसका भीतरी हाल मानूस कर लेते हैं। और आग में तपाकर और पानी में बुझाकर उसका खगपन जान लेते हैं। कालेपन में सीमा, ललाई में तांच मटभंनी सफाई में जरत और सफाई में चांदी क्रमशः अधिक मिली रहती है।

चांदी को शुद्ध करने की विधि ।

एक गढ़ा खोदते हैं उसमें विनवॉ कंड का थोड़ागा चूग डालते हैं। फिर उस बबूल की लकड़ी की गम्ब में भरते हैं और तर करके रक्कीदार बना लेते हैं। मिश्रण (खोटी चांदी) उसी में रख देते हैं और उसी के अनुसार सीमा मिला देते हैं। पहले सीम का चतुर्थांश चांदी के ऊपर रखकर कोयला भरते हैं और धौकनी में धौक कर गलाते हैं। वहुधा यह क्रिया चार बार की जाती है। धानु के खालिम हों जाने की पहचान यह है कि गताया हुआ पदार्थ माफ चमकता हुआ दिखलाई पड़ता है और किनारे की ओर ग जमने लगता है। जब जमते जमते बीच में भी कठोर होने लगता है तो उस पा पानी के द्वारा देते हैं। उस समय उस से मढ़े के सींग जी तरह लपट उठती है। नव उसकी शकिया जम जाती है और चांदी पुर्णतया शुद्ध हो जाती है। यदि यह शकिया फिर गताई जाय, तो हर तोले में आधी रक्ती माल जल जायगा, अर्थात् माँ तोले में ६ माशा २ रक्ती माल घट जायगा। चांदी एवं सीमा मिली हुई वह गख मुर्दाशख के सहश हो जाती है, हिन्दी में उसे 'कहरल' कहते हैं और फारसी में कोहना; इसका प्रयोग आगे बतलाया जायगा। इसके पहले कि जर्गब उसकी टिकियां बनावे, प्रति सौ

१—इसका उच्चारण खरल भी होता है।

तोले शुद्ध किये हुये माल में से ५ माशे ५ रत्ती खालसा के लिये निकाल लिये जाते हैं। फिर पारखी साफ टिकियो पर न्यायनुला के ठप्पो से निशान लगाता है जिस से वह बदलने न पावे।

प्राचीन काल में चांदी की खराई जानने के लिए भी लोग बानवारी क्रिया का प्रयोग करते थे, परन्तु अब निम्नलिखित साधन के उपस्थित होने के कारण वे उसमें प्रवृत्त नहीं होते। यदि १०० तोले शाही चांदी, जिसका इराक और खुरासान में चलन है और लारी एवं मिसकाली चांदी जो नूराज में प्रचलित है, में से ३ तोले १ रत्ती निकल जाय, और उतनी ही तौल की किरंगी तथा रुमी नारजील की चांदी में से, एवं गुजरात और मालवा की महमूदी और मुजफ्फरी चांदी में से १३ तोले ६^१ माशे घट जाय, तो इन चांदियों की गर्डि शहंशाही चांदी के वरंपन में मिल जायगी।

पन्द्रहवां, कुर्सकूब—माफ चांदी को तपा कर इतना कृटता है कि उसमें सीसे की गंध तक नहीं रहती। १००० रुपए की चांदी की मज़दूरी ४॥ दाम है।

सोलहवां, चाशनीगीर—खालिस किये हुये सोने और चांदी की जांच करता है और निम्नलिखित गीत्यनुभार शुद्ध होने की सनद दता है। वह २ तोले सोना लेता है, और ८ वर्क बनाता है। फिर पूर्वोक्त विधि में ममाला चुपड़ कर उनको तपाता है। हवा में बचाये रखता है और फिर धोकर गलाता है। यदि वे तौल में कम नहीं होते तो वह शुद्ध जानता है। प्रधान पारखी उनको कसौटी पर कसकर निजको और दृमरा को मन्तोप देता है। उपर्युक्त माल की जांच कराई वह १२ दाम लेता है। चांदी की परीक्षा करने के लिए १ तोला चांदी लेता है, और उतने ही सीसे के साथ उसे हड्डी की घरिया में गलाता है, और इतनी आंच देता है कि सीसा बिल्कुल जल जाता है। फिर उसे पानी में बुझाकर इतना कृटता है कि सीसे का संसर्ग नहीं रहता। इसके बाद नई घरिया में गलाकर तौलता है। यदि चांदी तीन चावल कम होती है तो यह पूर्ण खरे होने की पहचान होती है; अन्यथा वह उसे फिर गलाता है, यहां तक कि वह उसी दर्जे को पहुँच जाती है। इतनी चांदी जांचने की मज़दूरी ३ दाम ५^१ जीतल होती है।

सत्रहवां, न्यारिया—खाके-खलास (सलोनी) इकट्ठी करके दो दो सेर धोता है। सोना भारी होने के कारण तह में बैठ जाता है। धोई हुई राख को हिन्दी में कुकरा कहते हैं। उसमें भी कुछ सोना मिला रहता है। दूसरी क्रिया

द्वारा, जो आगे बनलाई जायगी, मोना निकाला जाता है। नीचे नैठे हृये मिश्रण में पाग मिलाकर मलते हैं। प्रति मेर मे ६ माश सीमा प्रयोग करते हैं। पाग प्रेम के आकर्षण में सोने को अपने में र्हाच लेता है। उसको शीशे के वर्तन में ढालकर आंच लेकर मोना अलग कर लेता है। उन्हें परिमाण की राख में मोना निकालने में न्यागिया को २० दाम २ जीतल मिलते हैं।

कुकरे की क्रिया—कुकरे के बगवर पुनहर मिलाते हैं, और रसी को गाय के गांवर में सानते हैं। फिर पहले मिश्रण को पीस कर दूसरे में मोद देते हैं; और उसके दो दो मेर के गोल बनाकर कपड़े पर मुख्या लेते हैं।

पुनहर की क्रिया—एक गढ़े को बबूल की राख से इस प्रकार भरते हैं कि एक मन सीम के प्रयोग करने में राख की ऊँचाई ६ अंगुल रहती है। उसका पेटा बगवर करके सीसा राख देते हैं और कोयले चुनकर उसे गलाते हैं। फिर कोयले हटाकर उस पर कौट दार दो मिट्टी के तख्ते लगा देते हैं। धौकनी की तरफ का सूखाख बन्द करके दूसरी ओर का छेद मुला रखते हैं। पर इस छेद को भी एक इंट में उस ममय तक ढाँपे रहते हैं, जब तक कि राख सीमे को विलकुल नहीं मोग्य लेती। कर्मचारी उस इंट को जगा जगा उठाकर सीमे का हाल मालूम करते रहते हैं। सीमे के उपर्युक्त परिमाण के लिए चार माश चांदी राख में मिला देते हैं। राख को पानी से ठंडा कर लेते हैं, उसो को पुनहर कहते हैं। उन्हें मेरे २ सेर सीसा जल जाता है और राख ४ मेर बढ़ जाती है। सब सामान तौल में १ मन २ सेर होता है।

रसी—एक प्रकार का नेजाब है, जिसको सज्जी और शोरा-मिट्टी में बनाते हैं।

यत् पुनहर और रसी का हाल निवेदन कर चुका, अब मुख्य विषय पर आता हूँ और कुकरे की क्रिया पूर्ण करता हूँ। तन्दूर की तरह एक भट्टी बनाते हैं, जिसके दोनों मुँह छोटे, पेट बड़ा और ऊँचाई छेद गज होती है। उसकी पेटी में छेद करके भूमि में एक गढ़ा खोदते हैं और उसी पर उसे रखते हैं। इस भट्टी को कोयलो से इस प्रकार भरते हैं कि वह चार अंगुल खाली रहती है। फिर दो धौकनियों से आग जलाते हैं। जब आग दहकने लगती है तो उन गोलों में से एक एक को तोड़कर उस अग्निकुंड में डालते और गलाते हैं। मोना, चांदी, तांबा तथा सीसा छिद्र द्वारा उस गढ़े में आ जाता है। उसकी बच्ची हुई सामग्री बाहर निकाल लेते हैं और मुलायम बनाकर धोते हैं, सीमा अलग निकल आता

है। इसी प्रकार गर्व इकट्ठी कर लेते हैं और दूसरी क्रिया द्वारा उससे भी लाभ उठाते हैं। धातु (ग्वनिज) को गढ़े से निकाल कर पुनर्हर की तरह गलाते हैं। सीसा राख में मिल जाता है, जिसमें से ३० सेंग निकल आता है और १० सेर जल जाता है। सोना, चांदी, तांबा एवं थोड़ा सीमा अपनी हालत में (पिण्ड में) रह जाता है, उसको बुगरावटी कहते हैं, और कुछ लोग गुथरावटी पुकारते हैं।

बुगरावटी की क्रिया—एक गढ़ा खोदत है, और उसमें सौ तोले बुगरावटी के लिए आध सेर बबूल की गर्व भरते हैं। उस गर्व को रकेबीदार बनाते हैं और बुगरावटी उसमें भर देते हैं। माथ ही १ तोला तांबा और २५ तोले सीमा उसमें बढ़ा देते हैं। फिर कोयला भर कर इटे ढक देते हैं। जब मिश्रण गल जाता है, तो कोयला और इटे हटा कर बबूल की लकड़ी यहाँ तक जलाते हैं कि तांबा और सीमा गर्व में मिल जाता है। और मिला हुआ सोना चाँदी अलग हो जाता है। उस गर्व को भी कहरल कहते हैं। उसमें सीमा और तांबा निकल आता है, जिसकी क्रिया आंग बतलाई जायगी।

आईन द

सोने से चाँदी अलाई करने की रीति ।

मिश्रित सोना चाँदी छे वार गलाते हैं, तीन बार तांबे के साथ और तीन बार छांदिया गंधक के साथ। एक तोला मिश्रण के लिए एक माशा तांबा और दो माशे दो रत्ती गंधक लेते हैं। पहले, तांबे के माथ गलाते हैं, फिर गंधक के साथ। यदि मिश्रण १०० तोले हों तो तांबा भी १०० माशे प्रयोग करते हैं। पहले उसमें ५० माशे मिलाकर गलाते हैं, शेष आधे को फिर दो बार (पच्चीस पच्चीस माशे मिला कर) टिघलाते हैं। गंधक को भी इसी क्रम से गलाते हैं। उस मिश्रण (सोना चाँदी) को चूरा चूरा करके घरिया में भरते हैं और ५० माशे तांबा मिला कर गलाते हैं। उसके पास ठंडे पानी से भरा हुआ एक बर्तन रख लेते हैं। उसके ऊपर एक खस का कुंचा बिछा देते हैं। गलित धातु उसी पर उड़ल देते हैं और एक लकड़ी में चलाते रहते हैं, जिसमें उसकी थकिया नहीं बँधने पाती है। फिर उन दुकड़ों को अन्य आधे मसाले के साथ मिला कर घरिया में भरते

और गलाते हैं। जब माल पिघल जाता है तो उसे उठा कर साथे म सुखाने हैं, जिससे वह ठंडा हो जाता है। मिश्रण के प्रति तोले के लिए दो माश दो रक्ती गंधक अर्थात् सौ तोले मिश्रण के लिए $\frac{1}{2}$ भर गंधक इस्तमाल करते हैं। तीन बार उसी प्रकार क्रिया करते हैं। फिर उस पर हल्के मफेद रंग की गख दिखलाई पड़ती है। वह असल मे चौड़ी है जो इस प्रकार निकली है। उसका उठाकर अलग रख छोड़ते हैं, उसकी क्रिया आगे बतलाई जायगी। जब मिश्रण तांबे और गंधक के साथ तीन तीन बार गलाया जा चुकता है तो शेष भाग मोने का थका हो जाता है। पंजाबी भाषा मे उसे कैल कहते हैं, और दिल्ली प्रदेश मे पिजर। यदि मिश्रण मे सोना अधिक मिला होता है तो साधारणतया ६ बान का निकलता है, परन्तु अधिकतर ५ बान प्रत्युत ४ ती बान का निकला करता है।

उसकी खराई बढ़ाने के लिए इन दो क्रियाओं मे मे एक का करना आवश्यक है। चार सौ तोले खरे मोने मे इस मोने के पचास तोले मिलाते हैं और सलोनी क्रिया द्वारा उसकी प्रति करते हैं या अलोनी क्रिया म काम चलाते हैं। अलोनी, दो हिस्मा जंगली गोवर और एक हिस्मा शोरा नमक का मिश्रण है। पिजर की सलाखे तैयार करके पत्र बनाते हैं। हर पत्र तोल मे उद्ध तोल मे कम नहीं होता, पर चौड़ाई मे उसमे अधिक होता है जिनना चौड़ा कि मलोनी के लिए बनाया जाता है। उनको मफेद और काले तिलो के तेल मे चूपड़ कर मसाला लगाते हैं। फिर हर बार ममाला लगाने मे उसे दो बार मंद मंद औच से तपाते हैं। इसी प्रकार तीन चार बार मोदते और तपात हैं। यदि इसमें भी अधिक खरा चाहते हैं तो उच्च क्रिया को कई बार करते हैं, यहाँ तक कि वह ६ बान का हो जाता है। उसकी भी गख रख लेते हैं, वह कहरल के ममान होती है।

आईन ६।

राख से चाँदी की निकालने की रीति ।

अलोनी क्रिया के पहिले और पीछे जो गख और मैल जमा किया है उसका दुगना खालिस सीसा मिलाकर उसे घरिया मे भरते हैं, और कोयलों की आग

पर रख कर एक पहर (३ घंटे) भर जलाने हैं। जब ठंडा हो जाता है तो सब्बाकी^१ के तरीके से माफ कर लेते हैं। इसकी भी गत्व कहरल होती है। सलोनी क्रिया अन्य रीतियों से भी की जाती है जोकि गुणियों गे छिपी नहीं है।

अठारहवां, पनीवार—कहरल गलाकर चांदी को तांबे से अलग करता है। एक तोला चांदी में उसकी मज़दूरी १^२ दाम होती है। लाभ प्राप्ति के उपलक्ष में कृतज्ञता प्रकाशन के रूप से वह ३०० दाम प्रति मास दीवान को देता है। कहरल को चूरा चूरा करता है और एक मन (कहरल) में १^२ मेर सुहागा और तीन गंर मज्जी कूटकर घूमीर बनाता है। फिर उक्त भट्टी मेर सेर भर डालता और गलाता है। चांदी मिला हुआ भीमा उस गढ़े में आजाता है और मन्दिर की क्रिया द्वारा माफ हो जाता है। जो भीमा इसमें अलग होकर मिट्टी में मिल जाता है वह फिर पुनर्हग हो जाता है।

उन्नीसवां, पैकार—मलोनी और कहरल शहर के मुनारे से खगीदता है, और टकसाल घर में गलाता एवं मोने और चांदी गे लाभ उठाता है। एक मन मलोनी में १७ दाम और एक मन कहरल में १४ दाम खालसा को देता है।

बीसवां, निचुई वाला—चांदी मिले हुये तांबे के पुराने मिक्के गलाता है, और १०० तोला चांदी में ३^२ रु० दीवान को देता है। जब चांदी पर मिक्का करता है, तो उसका नियत कर पृथक चुकाता है।

इक्कीसवां, खाक शोई—जब माल के स्वामी विभिन्न प्रकार से, जैसा कि ऊपर वर्णन किया गया है, चांदी और मोना ले लेते हैं, तो खाकशोई टकसाल भाड़ कर गत्व घर ले जाता है, और उनको धो कर लाभ उठाता है। बहुतेरो का इस पेशे से उद्यम चमक जाता है। लाभ उठाने के उपलक्ष में कृतज्ञता प्रकाशनार्थ वह राज्य को प्रतिमास २२^२ रुपए अदा करता है।

टकसाल के सभी पेशेवर राज्य को प्रति १०० दामों की आय पर, ३ दाम प्रतिमास कर स्वरूप देते हैं।

१—इसका उल्लेख पहले हो चुका है।

आईन १०

अचल राज्य के मुद्रा ।

जिस प्रकार सम्राट् के ध्यान देने से सोने और चाँदी ने अधिकाधिक शुद्धता प्राप्त की, उसी प्रकार मुद्रा की विपुल आकृतियों से भी उनका मुख

१ मुद्रा—भारतवर्ष से मुद्रा बनना कब प्रथम हुआ यह अभी तक निश्चित नहीं हो सका है। परन्तु पुरातत्त्वविदों के मतानुसार 'भारतवासी बहुत ही प्राचीन काल से विनिमय के लिए धातुओं के ऊंचे सिंकों का व्यवहार करते आये हैं। हिन्दुओं, बौद्धों और जैनों के सर्व प्राचीन धर्म-ग्रन्थों से भी पता चलता है कि प्राचीन-काल में भारत में सोने, चाँदी और तांबे के सिंकों का बहुत प्रचार था। सोने के सिंकों का नाम सुवर्ण वा निष्क, चाँदी के सिंकों का नाम पुराण वा धरण और तांबे के सिंकों का नाम कार्पोपण था (प्राचीन मुद्रा ले० राखालदाम बनर्जी)।

ऋग्वेद संहिता में निष्क का उल्लेख तीन स्थानों पर है, पहले, दूसरे और आठवें गण्डन से। पहले पं० ८५-कहिवान् ने प्राध नदि के सभी वर्ती राजा भावयव्य से १०० ग्रों और १०० गांड उपहार से लिये हैं, (शत रा० नाधमानस्य निकञ्चामावन्मयनान्प्रा० श्रादम्)। शत कलीवां अनुरस्त्र गोता दिवि श्रवोऽजस्मा लतान्। नृक० मे० ३ रू० १२६ मन्त्र २। इस पर सायणाचार्य का भाष्य इस प्रकार है - नाधमानस्य स्त्रीकर्तव्यमित्युच्चेर्यावमानस्य असूरस्य धनानां निरमितुः दानशीलस्य रा०ः स्त्रेजस्मा दीर्घमानस्य स्वनयस्य निष्कान् श्राभरण विशेषान् द्युत्तात्रिशेषविशिष्टानि वा सुवर्णानि

शत शत यज्ञाकानि शत महस्यमित्यपरिमित वचनं प्रपरिमितान् गत्वा, प्रार्थनानन्तरमेव कहीदानहं श्रद्धं आत्तवानस्मि स्त्रीलृत वानस्मी त्यर्थं । तथा प्रयत्नान् शुद्धान् लक्षणापेतान् शालावगमन सम्भान् हयान् शत शत मर्याकान् श्रद्धं आत्तवान् । तथा गोनां पुगव ता बल्लवर्दीनामित्यर्थं । उनर मंत्रे स्त्री गर्वानाममित्यानात् । तेषां शतं श्रादम् एवं प्रदाता राजा द्वितीयलाके श्वः कार्त्ति श्रज्जु शारपती यत्तनान् विस्तारितवान् गवादि प्रतिशृहीतान् स्त्रीं कार्त्तिमकरवमित्यर्थं ।)। दूसरे स्थल में रुद्र का वर्णन है जिसमें ऋषि रुद्यमन्त ने एक माला का उन्नेष्व किया है तो निष्कों का बना हुआ था, (अर्णु दिनपि भाग्नानि धन्वार्हन्निकं यजतं विश्वस्तम् । प्रह्लिदं इयमेव विश्वमभ्यं न वा ग्राजीयो रुद्र त्वदृस्ति । नृक० मण्डल २ मूङ ३३ मन्त्र १० । इसका अर्थ सायणाचार्य के शरण में इस एकार है—हे रुद्र ! त्व अर्हन् अहा ग्राम्य एव मन् गानकानि शरान् धन्व न तुश्च । दिनपि भाग्नमि तथा अहन्नेव यजतम् यज्ञीयं एवनायं विश्वरूपं तद्विधरूपयुक्तं निष्कं हार विभाषि तासा अहन्नेव इदं विश्वं सर्वं अन्ना भद्रामैतन् अति विस्तुतं जगत् दद्यमे रक्षनि देह रमणे । हे रुद्र ! त्वत्त्व-ज्ञान्यन्पत किञ्चित आंजीयः श्रोजस्त्रितर बलवत्तर नवाश्रम्भिः । न खलु विद्यने । अतस्त्वमेवोऽक्षयापारेषु योज्य इत्यर्थः । इसी प्रकार “निष्कं वा धा कृणवते स्वर्ज वा

शुतिमान हुआ। धनागार विभूषित होगया और जनता को सुख प्राप्त हुआ। मैं उसका कुछ वृत्तान्त वर्णन करता हूँ और उनकी विलक्षणताएं चित्रित करता हूँ।

दुहितर्दिवः, त्रिते दुःप्रपञ्च सर्वमाप्त्ये परिद्वास्यनेहसो व ऊतयः सुज्ञतयो व ऊतयः ऋक्० मण्डल द सूक्त ४७ मन्त्र १५, है। इसका अर्थ सायणाचार्य ने इस प्रकार किया है—है। दिवो दुहितरुषो निष्कवा ध आभरणविशेषं वा कृणवते कुर्वते स्वर्णकाराय यत् दुःप्रपञ्चं दृष्टं स्वर्णकारणं निर्माणममये दृष्टमित्यर्थः। वेति पूरणः वा शब्दश्चार्थेवा अथवा स्वजं माल्यं कृणवतेकुर्वाणेहत्यर्थः। तस्मिन्नपि मालाकारे मालानिर्माणममये यत् दुःप्रपञ्चं दृष्टं तदुभय विषय स्वप्न श्राप्त्ये अपांपुत्रे त्रिते वर्तमान परिददमसि परिद्वां वयं त्रिताः परित्यजामेत्यर्थः। अथवा त्रिते मनि यहुःप्रपञ्च दृष्टं तत्त्वर्णकाराय मालाकाराय वा परिददमसि अस्मत्तोऽपि निष्कृत्य तयोरुपरि स्थापयामः। वो युध्माकमृतयो रक्षणानि अनेहसः अपापानि अनुपदनाणि च ऊनयो वो युध्माकं रक्षणानि सउतयः गोमन लक्षणानि पुनर्मकिरादरार्था। इन क्रचार्यों में निष्क शब्द आना तथा उसका मुद्राभरण के रूप में प्रयोग होना प्रकट करता है कि ऋग्वेद के सभी में निष्क का प्रचार था। किन्तु ही विद्वानों का मत है कि वेदिक काल में राजा लोग मोने के निशेष परिमाण में वरावर दुक्ते करा लेते थे। यज में उन्हीं का दक्षिणा से देने थे वहीं ‘निष्क’ कहलाते थे। उन पर यद्यपि श्रादि भी बनाये जाते थे। उनको गृथ का हार बनाते थे तथा ऋषि और वाह्यणादि शाज कल की मोहरों के हार हमेलों की तरह पहनते थे। इन मंत्रों में आभूषण में आशय निष्कों के हार से हैं, और निष्क से आशय विनिमय के काम में आने योग्य मुद्रा से हैं। यह सब स्वीकार करते हैं कि ऋग्वेद मसार

का प्राचीनतम ग्रन्थ है। अतः निष्क उतनाही प्राचीन है जितना कि ऋग्वेद।

‘शतपथ ब्राह्मण’ में एक स्थान पर हिरण्यं सुवर्णं शतमानम् (अर्थात् पीले रंग की ‘शतमान’ नामक सुवर्ण मुद्रा) का उल्लेख है। यह तोल में एक पल था। किंवा किसी विद्वान् के मत से निष्क का दृमरा नाम शतमान है।

मनुस्मृति के आठवे अध्याय (श्लोक १३१-१३८) में पुराने मुद्रों का मान इस प्रकार दिया हुआ है। मनु ने रोशनदान के प्रकाश में उड़ते हुये दिखलाई पड़ने वाले नृंगों को सबसे छोटा माना है। उन्होंने त्रिमरणु कहते हैं।

८ त्रिमरणु = १ लिङ्गा

३ लिङ्गा = १ राई

३ राई = १ मङ्गेद सरसो

६ सरसो = १ मङ्गला जो

३ जो = १ कृष्णल रक्ती

८ कृष्णल = १ माप

१६ माप = १ सुवर्ण

४ सुवर्ण = १ पल

१० पल = १ धरण

२ कृष्णल = १ रोप्य (चांदी का) मापक १६ मापक = १ रोप्य धरण या पुराण तांत्रे के कर्षभर के पण (पैमे) का नाम ‘कार्पीपण’ है।

१० धरण = १ चांदी का शतमान

४ सुवर्ण = १ निष्क।

निष्क का मान भिन्न भिन्न समयों में ‘शब्द मागर’ के अनुसार इस प्रकार रहा है:—

१ निष्क = १ कर्ष (१६ मापों)

१ „ = १ सुवर्ण „

१ „ = १ दीनार „

स्वर्ण मुद्रा ।

(१) सहँसा—एक गोल मुद्रा है; तोल १०१ तोले ६ माशे ७ रस्ती;

१ निष्क = १ पल (४ या ८ सुवर्ण)

१ „ = ४ माशे

१ „ = १०८ या १५० सुवर्ण

सुवर्ण भी एक सिक्का था । बौद्धों के ग्रन्थिक में “पमुतम् हिरण्य सुवर्णाण्” एक पद है । इसमें हिरण्य और सुवर्ण दोनों शब्द आये हैं । हिरण्य से अमुद्रित सोने का और सुवर्ण से ‘सुवर्ण’ नामक मिक्के से तात्पर्य है ।

जो लोग यह कहते हैं कि प्राचीन भारतीयों ने सिक्का बनाना विदेशियों से सीखा, वे भूल में हैं । यह सब जानते हैं कि सन् ३२६ ईसा के पूर्व जब सिकन्दर ने इस देश पर आक्रमण किया था तो राजा आमिर ने उपहार स्वरूप उसको चाँदी के बहुत में सिक्के, १००० भेड़े और ३००० बैल दिये थे । ये मिक्के भारतवर्ष में ही निर्मित हुये थे । इसके अतिरिक्त रोम के इतिहासज्ञ किन्टस कट्टियम के अनुसार सिकन्दर जब तक्षशिला पहुंचा था तो वहां के राजा ने उसको ८० टेलेएट के मूल्य का अद्वितीय किया हुआ चाँदी का दुकड़ा उपहार में दिया था (Coins of Ancient India) । यह अद्वितीय मुद्रा भारतवर्ष का ही था । सर अलेक्ज़ण्डर कनिष्ठम तथा रैप्सन का मत है कि प्राचीन भारत के सिक्के इसी देश के तोल के अनुसार बने हैं, क्योंकि इनका आकार प्रकार संसार की अन्य ज्ञातियों से भिन्न है ।

मुद्रों के निर्माण काल के अन्वेषण के सम्बन्ध में, तक्षशिला की खुदाई में पुरातत्व विभाग के प्रधान अधिकारी सर जान मार्शल ने जो बहुत से पुराणे तथा चाँदी के कार्यालय निकाले हैं, वे दूसरे दियादात के समय के

हैं । दियादात का समय, ईसा के पूर्व तीसरी शताब्दी के अन्तर्गत माना जाता है । पादरी लोवेनथाल के मतानुसार दक्षिण भारत में पुराणों का चलन बहुत प्राचीन काल से रहा है और वे तीसरी शताब्दी तक चलते रहे हैं । अनेक पुरातत्वविदों के मतों का सार यही है कि भारतवर्ष में मुद्रा का चलन ईसा के १००० वर्ष पूर्व से चला है । पर, यह मत अनितम और निश्चित है, यह नहीं कहा जा सकता । क्योंकि मोहनजोदाहो (झिला लरकाना, सिन्ध) तथा हरप्पा (झिला माराटगुमरी, पंजाब) में जो खुदाई हुई है, उसमें बड़ी बड़ी विलक्षण वस्तुएँ निकली हैं, यथा—मिट्टी के बर्तन, खिलौने, नीले काँच और लेह तथा सीपी की चूड़ियाँ, चाकू, चक्रमाक की कीलें, पांसे और शतरंज के मुहरे, पत्थर का अंगूठियों का अद्भुत अनुक्रम, लाल पत्थर और सीप आदि का बना हुआ हार और नए नमृने के सिक्के या सील मुहरें आदि ।

मोहनजोदाहो की सभ्यता ईसा से ३००० या ३५०० वर्ष पहले की मानी जाती है । इसमें यह सिद्ध ही होगया कि भारतीय आज से १००० वर्ष पहले ऐसी वस्तुएँ तैयार करते थे जो संसार के लिए अनोखी थीं । इनमें सब से अपूर्व वस्तु सिक्के या निशान हैं जिनके सम्बन्ध में “हरिडयन हिस्टरिकल कार्टरली” में लिखा है कि भारतवर्ष के बाहर दूसरे प्राचीन स्थानों में जिनकी सीलें अनुसन्धान में अभी तक पाई गई हैं उनमें से कोई भी आकार, प्रकार तथा वित्रण में इन सीलों के समान नहीं हैं (None of the seals discovered

मूल्य १०० लाल जलाली। उसके एक ओर, बीच में, सम्राट् का नाम लिखा हुआ
in other ancient sites outside India bear resemblance to these seals in shape devices or pictographs. The Indian Historical Quarterly, March 1932 P 131)। उन मीलों पर जो लेख हैं वे संसार की सभी लिपियों से मिल लिपि में लिखे हुये हैं। विद्वान् उनको पढ़ रहे हैं। संभव है उनमें तथा अन्य स्थानों की खुदाई में मुद्रा निकल आवे।

के मरने पर जेठे भाई का लड़का राज्य का अधिकारी होता था।

कुशन वंशियों के सिक्षण से उनका शीत प्रधान देश का निवासी होना सिद्ध होता है। राजतरङ्गिणी के अनुसार वे तुकिम्तान के रहने वाले थे। हस्ती लिपि, शीत निवारणार्थ उनके शरीर पर लबे लबादे आदि देख पड़ते हैं। वे शिव, बुद्ध और

‘प्राचीन मुद्रा’ के अनुसार खुदाहयों में सोने के पुराने निष्क, मुवर्ग अथवा पल नामक सिक्के अभी तक कहीं नहीं मिले हैं, किन्तु चौदी के चौकोर और गोल लाघों सिक्के प्राप्त हुये हैं। पुरातत्वविदों के अनुसार यहीं प्राचीन पुराण वा धरण है। ये कदाचित् चौदी के पत्रों को काट कर बनाये गये हैं। इनके पश्चात् ही अङ्क चिह्न युक्त (Punch marked) सिक्कों का चलन चला है।

विदेश वालों में यूनानियों के जो सांने चाँदी तथा तांबे के मिक्के मिले हैं, उनसे मालूम होता है कि वहाँ के पच्चीस शासकों ने अफगानिस्तान और पंजाब पर शासन किया था। इन पर प्राचीन ग्रीक लिपि के लेख के साथ साथ खरोष्टी लिपि में उसका अनुवाद दिया हुआ है। जिसमें एक दृमरी की महायना में दोनों लिपियाँ पढ़ी जा सकती हैं।

क्षत्रप वंशी राजाओं के प्राप्त मिक्रो
कलदार चवन्नी के बराबर हैं। उन पर
क्षत्रप या महाक्षत्रप का नाम, उपाधि और
संवत् दिया हुआ है। इन मिक्रों से
दो दर्जन के लगभग राजाओं का पता चलता
है। इन से यह भी मालूम हुआ है कि
राजा के मरने पर पुत्र के बजाय क्रमशः
उसके भाई राज्य करते थे। अन्तिम भाई

ओर, बच्च में, सम्राट् का नाम लिखा हुआ
के मरने पर जेठे भाई का लड़का राज्य
का अधिकारी होता था।

कुशन वंशियों के सिक्षां में उनका शीत प्रधान देश का निवासी होना सिद्ध होता है। राजतरङ्गिणी के अनुसार वे तुर्किस्तान के रहने वाले थे। हसी लिए शीत निवारणार्थ उनके शरीर पर लबे लबादे आदि देख पड़ने हैं। बैंशिव, बुद्ध और सूर्य आदि के उपासक थे। यज्ञ प्रेमी होने के कारण राजे अग्निकुर्ख में आहुति देते हुये दिखलाई पड़ते हैं।

गुप्त वर्ण के मिक्रों सर्वोत्तम है और
वे साने, चांदी तथा तांबे के प्राप्त हैं। इन
में से किसी में एक अश्व या स्तम्भ में
बंधा हुआ है जो दक्षिणा देने या अश्वमेध
यज्ञ की स्मृति दिलाने के लिये है। दूसरे
प्रकार के मिक्रों में राजा बाजा बजा रहा
है। तीसरे प्रकार के मिक्रों में राजा तीर
से शेर का शिकार कर रहा है। हम
वंश के समुद्रगुप्त, छित्रीय चन्द्रगुप्त और
स्कन्दगुप्त आदि ने समार भर में सब में
पहले अपने मिक्रों पर छंदोबढ़ लेख लिख-
वाये थे। हमी प्रकार अन्य वंशों के मिक्रों
का भी विवरण जानना चाहिये।

मध्यकाल के भारतीय सिङ्कों पर विदेशी सिङ्कों का भी काफ़ी प्रभाव पड़ा था। कितने सिंकों के तो उनकी हृबहृ नकल है। नकल बुरी बात नहीं है यदि उसका उपयोग समझदारी में किया जाय, किन्तु यहाँ कई सिङ्कों की नकल से बड़ा अन्तर्थ हुआ है। जैसे हण्ण तोरमाण हरान का सजाना लृट कर भारतवर्ष में ले आया था। मालवा, गुजरात, काटियावाड और राजपूताना आदि में कई सदियों तक उन्हीं सिङ्कों की नकलें बननी रहीं। उनमें राजा की आकृति

है, और पौचों तरफ की महराजों में—‘अस्यज्ञानुलत्राजम् अलग्वाकानुलमां अज्ञम् खक्षदय अल्लाहुमुल्कृ व मुल्नानह जर्व दामलखिलाफत आगग’। उसके दूसरी बिगड़ते बिगड़ते यहाँ तक प्रवाव हुइ कि लोगों ने राजा का चेहरा गदहे का घुर समझ लिया और उन मिक्कों को गधीया या गड़ीया मिक्के कहने लगे। ‘अजमेर बमाने वाले राजा अजयदेव चोहान तथा उनकी रानी सोमल देवी के चार्दा के मिक्कों के एक तरफ वही माना हुआ गधे के घुर का चिन्ह और दूसरी तरफ उनके नाम अंकित हैं।’ किन्तु बापा रावल के स्तर्ण मुद्रों तथा प्रतिहार वंशी भाजदेव आदि के मिक्कों में मालूम होना है कि उन्होंने किसी की, नक्ल नहीं की, वरन् वे पुरानी शैली के मिक्के बनवाते रहे।

ये मिक्के अनेक राजवशों के जैसे ग्रीक्, शक, पार्थियन, कुशन, द्वचप, गुप्त, अर्जुनायन, ओदुंबर, कुनिन्द, मालव, नाग, राजन्य, योधेय, आध्र, हण, गुहिल चोहान, कलचुरि (हेह्य), चदेल, नामर, गाहड़वाल सोलंकी, यादव, पाल, कदेव आदि के तथा काश्मीर के भिन्न भिन्न वशों के, कांगड़, नंपाज, आमाभ मणिपुर आदि के भिन्न भिन्न राजाओं के तथा अर्थोंया उज्जैन, कोशांवी, तद्शिला मधुग, अहिंचुरपुर आदि नगरों के राजाओं के एवं मध्यमिका आदि नगरों के मिलते हैं। भारतवर्ष के प्राचीन सोने, चोदी और तांबे के सिक्कों के कई बड़े बड़े संग्रह इंग्लैण्ड, फ्रांस, जर्मनी, और रूम आदि यूरोप के देशों में, कलकत्ता बम्बई आदि को पुश्टियाटिक सोमायिटियों के संग्रहों में, तथा इण्डियन म्यूज़ियम् (कलकत्ता) बंगीय साहित्य परिपद (कलकत्ता), लखनऊ म्यूज़ियम्, राजपूताना म्यूज़ियम् (अजमेर),

सरदार म्यूज़ियम् (जोधपुर), वाटमन म्यूज़ियम् (राजकाट) प्रिन्स आल वेल्स म्यूज़ियम् (बंवई), मद्रास म्यूज़ियम्, पंगावर म्यूज़ियम्, लाहोर म्यूज़ियम्, पटना म्यूज़ियम्, नागपुर म्यूज़ियम् आदि कई एक संग्रहालयों में तथा कई विद्यानुरागी गृहस्थों के निजी संग्रहों में विद्यमान हैं” (हिन्दी प्राचीन मुद्रा की सूचिका पृ० ७-८)।

मुसलमान बादशाहों के मिछों में महमाँ गजनवी ने अपने मिक्कों पर वे विचित्र लेख लिखवाये। उनमें देव नारायण लिपि में लिखा था—“अथ अव्यर्थमेक मुहम्मद अवतार नृपति महमूद” तथा, “अथ २क महमूद संवत् ४१२।” ऐसा मालम होना है कि उसके दरबार में कुछ भारतीय पंडित थे, उन्होंने उसको पगम्बर मुहम्मद का अवतार बना दिया था। ये मिक्के लाहोर के बने रुखे थे। उन दिनों लाहोर, गजनवी और नाशापुर में टकमाले थे। इनके अनिरिक्त नान चार जगहें और थी। कबुल म उन दिनों कोई टकमाल न था, (Thomas, in Journal of Royal Asiatic Society Vol. IX P. 67, and Vol. XVII P. 167, quoted by C. B. Vaidya in his Downfall of India P. 115.)

अन्य मुसलमान बादशाहों के मिक्के आमानी में मिल जाते हैं और उनका हाल भी लोगों को मालूम है, इस लिए उनके सम्बन्ध में कुछ नहीं लिखा गया है।

१—महाराजाधिराज, महाराजराजेश्वर, उसका राज्य और शासन सदा बना रहे, राजधानी आगरा में अङ्कित किया गया।

तरफ बीच मे पाक कलमा॑ और यह आयत—“अल्लाहु यजुर्को मँइयशाउ बिगैरे हिसाब” और उसके आसपास पहले चार३ खलीफों के नाम।

पहले, मौलाना मक्कसूद मोहरकन ने, उपर्युक्त वाक्य खोदने मे कार्य पटुता दिखलाई थी, उनके बाद मुझा अली अहमद ने निम्नलिखित वाक्य लिखकर विचित्रता प्रकट की। मुझा ने एक ओर—“अफज्जलो दीनार यनकक्हू-अर्रजुलु दीनार यनकक्हू अला असहाविही फी सबीलिल्लाह” बढ़ा दिया; और दूसरी तरफ—“असुसुलतानुलअली अलखलीफतुलमुतअली खलदअलअल्लाहु तअला मुलकहू व सुल्तानहू व अब्बदअलअदलहू व एहसानहू।”

पीछे से उसने सब इवारत सारु करदी, और कवि सम्राट् एवं दार्शनिक शख्त फैजी की दो रुबाइयाँ खोद दी। सहँसा के एक आंरः—

“खुर्शीद कि हफ्त बह अज़-ओ गौहर याफ्त;
संगे सियह अज परत्वे आं जौहर याफ्त।
कान अज नज़रे तर बियं ऊ ज़र याफ्त;
वां ज़र शरफ अज सिक्कए शाह अकबर याफ्त।”

और बीच में, “अल्लाहु अकबर, जल्ल जलाल हू।” दूसरी आंर यह रुबाइः—

“ई सिक्का कि पीरायये उम्मीद बुअद;
बा नक्शा-दवाम-ओ नाम-ए जावीद बुअद।

१—“लाइलाह इल्लिल्लाह मुहम्मद पोषण-दृष्टि से खान ने सोना पाया और रसूलल्लाह।” सोने ने बादशाह अकबर के सिक्के से

२—ईश्वर, जिसको चाहता है, बिना हिसाब रोज़ी देता है। प्रतिष्ठा प्राप्त की।

३—बकर, उमर, उसमान और अली।

४—सबसे बढ़कर वह दीनार है, जिसको कोई व्यक्ति अपने धर्म बन्धुओं पर ईश्वर के मार्ग में व्यय करता है।

५—श्रेष्ठ सुलतान और उच्च पदस्थ खलीफा; परमेश्वर सर्वदा उसका देश और उसकी बादशाही स्थिर रखें, और उसका इन्साफ और एहसान हमेशा बनाये रखें।

६—यह सूर्य है जिससे कि सात समुद्रों ने मोती पाया, काले पथर ने जिसकी धुति से प्रतिभा प्राप्त की, जिसकी

[मध्यकाल के प्राकृतिक तत्ववेत्ताओं के मतानुसार, सूर्य के प्रभाव से ही धातु, मोती और बहुमूल्य मणियों का आविर्भाव होता है। देखिये तेरहवां आईन।]

७—ईश्वर महान है, उसका ऐश्वर्य महान है।

८—यह सुदा, जोकि आशा का भूषण है, अमिट आकारों और चिरस्थायी नाम के साथ स्थिर रहेगा। उसकी भागवानी के चिह्न के लिए इतना ही पर्याप्त है कि संसार मे सूर्य का भेट किया हुआ एक परमाणु चिरस्थायी रहेगा।

सीमाण्सअङ्गतश हर्मा वम कि बनह .
यक जर्ग नजर करदण खुर्शीद दुआइ ।"

और स्थायित्व का चिह्न डलाही माल और महीना वीच में अंकित कर दिया ।

(२) इसी नाम और इसी शक्ति का एक और स्वर्ग मुद्रा है ६१ तोले द माशे का । इसका मूल्य ग्यारह माशे वाली १०० गिर्द' मोहरे है । इस पर भी पहले वाले ही अद्वा है ।

(३) रहस - पूर्वोक्त दोनों मुद्राओं का अद्वा । कर्मी चार कोने का भी बनता है । उसके एक तरफ वही मौ मोहर वाली (सहेमा) के चिह्न है ; और दूसरी ओर मलिकुरशोअग्रा शंख फैजी की यह रुबाई :—

"ई नकदे रवाने गंजे शाहिशाही ,
बा कौकबे इकबाल कुनद हमगाही ।
खुर्शीद विपरवरिश अजांस किबद्ध ;
यावद शरफज सिक्कए अकबर शाही ।"

(४) आत्मा—सहेमा का चतुर्थांश ; गोल और चौकोण । इसके कुछ मुद्रों पर सहेमा के अंक है, और कुछ पर मलिकुरशोअग्रा की यह रुबाई :—

"ई सिक्का कि दस्ते-बख्ल रा जेबर बाद ,
पीरायाना नोह सिपहो हफ्त अख्लर बाद ।
जर्ग नकदस्त कारअजो-चुं जर बाद ,
दर दहरं रवाँ बनाम शाह अकबर बाद ।"

—और दूसरी ओर पहली रुबाई ।

(५) बिसत—आत्मा की दोनों शक्ति के समान । इसे पहले सिक्के के पञ्चमांश के बगबर बनाते है ।

इसी प्रकार सहेमा के आठवे, दसवे, बीमवे और पञ्चामवे, भागों के भी सिक्के है ।

1—गोल ।

2—यह शाही खजाने का प्रचलित मुद्रा, सौभाग्य नहर के साथ रहता है । सूर्य उसका पोषण इस लिये करता है कि वह संसार में अकबर शाही सिक्के द्वारा सुकीर्ति प्राप्त करे ।

3—यह मुद्रा, जो भाग्य-कर का भूषण है, नो आकाशों और सप्त ग्रहों का शङ्खार हो । यह एक सोने का सिक्का है, इसमें सोने के मदश कार्य सिद्ध हो । संसार में अकबर बादशाह के नाम से प्रचलित हो ।

(६) जुगुल^१—चौकोन, महंसा का पञ्चासवां हिम्मा, मूल्य दो मोहर ।

(७) लाल जलाली गिर्द—तौल और मूल्य में दो गिर्द मोहरों के समान । एक और “अल्हाहो अकबर” और दूसरी और ‘या मुईन’^२ ।

(८) आफताबी—गोल, तौल १ तोला ३ माशे ४^३/_४ रत्ती, मूल्य १२ रुपए । एक और “अल्हाहो अकबर जल जलाल हूँ,” और दूसरी और महीना, इलाही साल और सिक्का लगाये जाने का स्थान ।

(९) इलाही—गोल, तौल १२ माशे १^३/_४ रत्ती, इस पर आफताबी के समान लिखावट है । मूल्य १० रुपए ।

(१०) लाल जलाली चहार गोशा—चौकोण, तौल और मूल्य इलाही के समान । एक और “अल्हाहो अकबर”, दूसरी और “जल जलाल हूँ” ।

(११) अद्वल गुटका—गोल, तौल ११ माशे, मूल्य ६ रुपए । एक और “अल्हाहो अकबर” दूसरी तरफ “या मुईन” ।

(१२) मोहर^३ गिर्द—गोल, तौल और मूल्य में अद्वल गुटका के सदृश पर लिखावट और प्रकार की ।

१—मूल ग्रन्थों में इस शब्द के अक्षम-
न्यास अमात्मक है । इसे चुगुल भी पढ़ा
जा सकता है । तौल और मूल्य में भी
भिन्नता है । किसी किसी में लिखा है
चौकोर चुगुल की तौल ३ तोले २^१/_४ रत्ती
और मूल्य ३० रुपए है । जो चुगुल गोल है,
वह २ तोले ६ माशे भर की है । उसका
मूल्य ११ माशे वाली ३ मोहरे अर्थात्
२७ रुपए है । लिखावट दोनों पर एक सी है ।

२—हें सहायक !

३—अधिकतर सिक्के के रूप में यही
मोहर चलती थी । मोहर फ्रांसी भाषा का
शब्द है । “हाव्सन् जाव्सन्” के अनुमार
यह ‘मेहर’ शब्द से, जिसका अर्थ सूर्य
होता है, निकला है, इसका दूसरा
अर्थ, छाते के सिरं पर का सुनहला छोटा
घेरा, होता है । कुछ विद्वानों का मत

है कि यह मुद्रा शब्द में जो सिक्का और
छाप दोनों अर्थों में व्यवहृत होता है,
निकला है । राजपूताने में सोने के सिक्कों
को पुराने समय में सुवर्ण, निक, शतमान,
पल, दीनार, गद्याणक आदि कहते थे
(राजपूताने का इतिहास जिल्द पहली) ।
भारतवर्ष के अन्य भागों में भी सोने के सिक्कों के
करीब करीब ऐसे ही नाम थे । पर इनमें मुद्रा
के अनिस्त्रिक्त कोई नाम ऐसा नहीं है, जिससे
सुहर शब्द निकला हुआ जान पड़े । यद्यपि
सोने के सिक्के और मुसलमान बादशाहों
ने भी बनवाये थे, किन्तु मोहर नाम से
उनकी अधिक ल्याति ग़ज़नी के गोरी बादशाहों
के समय में ही हुई । उन्होंने सन् १२०० ई०
में १०० रत्ती (१७५ ग्रॅन) की मोहर
बनाई, और उसका मूल्य रुपए का दस^४
गुना नियत किया । मुहम्मद तुग़लङ्क की

(१३) महराबी—तौल, मूल्य और लिम्बावट में मोहर गिर्द के समान।

(१४) मुईनी—चौकोर और गोल; तौल और मूल्य में लाल जलाली और मोहर गिर्द के सदृश। “या मुईन” खुदा हुआ।

(१५) चहार गोशा—अंक और तौल आफताबी के समान।

(१६) गिर्द—इलाही का अद्भुत और बही अंक।

(१७) धन—लाल जलाली का अद्भुत।

(१८) सलीमी—अद्वल गुटका का अद्भुत।

(१९) रबी—आफताबी का चौथाई।

(२०) मन—इलाही और जलाली का चौथाई।

मोहर २०० ग्रेन की थी। कम्पनी की मरकार ने सब में पहली मांहर मन १७६६ है० में बनाई और उसका मूल्य १४ मिक्का सूपया करार दिया। आतकल भारतवर्ष में माने का मिक्का नहीं बनता है।

१ - यह महराबी कर्दाम है। इसी तरह का एक और मिक्का था जिसको महराबी जदीद कहते थे। कर्दाम की तरह यह भी छें कोने का मिक्का था। इसकी तौल ११ माशे २ रक्ती थी। इसके एक और “अल्लाहु अकबर ज़ल्ल जलाल है”, और दूसरी ओर “इसुरदाद हलाही ज़र्ब आगरा ४६” अंकित है। ‘आईने अकबरी’ में इस मुद्रा का उल्लेख नहीं है। पर नवनकिशास प्रेम से ‘आईने-अकबरी’ का जो स्म्करण १८८८ मर सन् १८६३ है० को प्रकाशित हुआ था उसमें मिक्कोंके सम्बन्ध में एक परिशिष्टा है, उसमें महराबी जदीद का उल्लेख है। किन्तु परिशिष्ट की टिप्पणी में यह बात लिखी है कि ‘आईने-अकबरी’ में इसका जिक्र नहीं है। जुलाई सन् १८३१ है० के ‘हिन्दुमतानी’ में इसी मिक्के के सम्बन्ध में लिखा है,— “एक और मुहर आगरा टकमाल में अकबर के उनचासवे (४६वें) सन् इलाही में जारी

हुई थी। इसका एक नमूना लखनऊ के अजायब घर में भी है।” यह मिक्का सन् १८०४ का है, और ‘आईने अकबरी’ के लंबक की हत्या १२ अगस्त सन् १८०२ को हो चुकी थी। मंभवत इसी में “आईने अकबरी” में इसका समावेश नहीं हो सका।

उसी ‘हिन्दुमतानी’ में एक और मिक्के के दारे से लिखा है,— ‘विटेन के अजायब घर में एक तहत ही नायाब मोहर इलाही सन् १० का मौजूद है। उस पर एक और एक बताव वर्णा हुई है और दूसरी ओर “अल्लाहु अकबर १० खुदाद, ज़रब आगरा लिखा हुआ है।” इसका भी उल्लेख आईने अकबरी में नहीं है।

नवनकिशासी के परिशिष्टांश में एक दूसरे प्रकार की मोहर-गिर्द जदीद का उल्लेख है। वह ११ माशे की थी। उसके एक और रामचन्द्र और मीता का चित्र और देननागरी लिपि में शब्द “राम” तथा दूसरी ओर “फरवर्दान इलाही ४०” अंकित है।

इसी प्रकार अकबर के और भी नाना प्रकार के मिक्के हैं, जो मंग्रहालयों में सुरक्षित हैं, परन्तु ‘आईने अकबरी’ में उनका उल्लेख नहीं है।

(२१) निस्फी सलीमी—अदूल गुटके का चौथाई ।

(२२) पंज—इलाही का पंचमांश ।

(२३) पारण्डौ—लाल जलाली का पांचवां भाग एक ओर 'लाल' और 'नसरीन'^२ खुदा हुआ है ।

(२४) समनी—इसे अष्ट सिद्धु भी कहते हैं । यह मोहर इलाही का अष्टमांश है । एक ओर 'अल्लाहो अकबर' और दूसरी ओर 'जल्ल जलाल हूँ' ।

(२५) कला—इलाही का सोलहवां भाग, दोनों ओर नसरीन के फूल खुदे हुये हैं ।

(२६) जर्रा—इलाही का बत्तीसवां हिस्सा, इसमें आकार कला के समान है ।

नियम यह है, कि सम्राट् की टकमाल में मोने से प्रति मास, लाल जलाली, धन और मन के सिक्के मुद्रित किये जाते हैं, परन्तु अन्य मुद्रा बिना नई आज्ञा के अद्वित नहीं होते ।

रौप्य मुद्रा ।

(१) रूपया^३—चांदी का नगद है, गोल ११^२ माश भर का । यह पहले, शेर खाँ के समय में प्रविष्ट हुआ और इस प्रतापी राज्य में पूर्णता को पहुँचा, एवं नवीन अंक खाँ दे गये । एक ओर "अल्लाहो अकबर जल्ल जलाल हूँ"; और दूसरी तरफ तारीख । यद्यपि इसका भाव ४० दाम से घटता बढ़ता रहता है; परन्तु वेतनादि के सम्बन्ध में इसकी यही दर स्थिर रहती है ।

१—पोस्त का लाल रंग का फूल, जिसमें प्रायः काली ख़स ख़स पैदा होती है ।

२—सेवती ।

३—"एक ओर चांदी का सिक्का है, जोकि बहुत ही दुष्प्राप्य है, परन्तु सोभाग्य से लखनऊ अजायब घर के लिए प्राप्त कर लिया गया है । उस पर रूपया शब्द लिखा हुआ है । इसके संबन्ध में मुख्य बात यह है कि किसी चांदी के सिक्के पर रूपया शब्द नहीं लिखा है । यद्यपि साधा-र्थातः चांदी के विशेष तौल के सिक्के को रूपया कहते हैं" (हिन्दुस्तानी जुलाई

सन् १९३१) 'आर्द्धने-अकबरी' में इसका भी उल्लेख नहीं है ।

रूपया, संस्कृत में रूप्य शब्द से निकला है । कोटिल्य ने लिखा है—"लक्षणाध्यक्ष लोहा, रांगा, जस्त, काला सुरमा, आदि में से किसी एक का एक माशा, चौथाई तांबा तथा चांदी लेकर रूपया (रूप्य रूप) बनवावे" (कोटिल्य का अर्थ शास्त्र, अधिकरण २) । हिन्दुओं के अनेक प्राचीन चांदी के सिक्के मिल चुके हैं । विलसन के मतानुसार रूपए का चलन शेरशाह ने १५४२ ई० में चलाया । "हाथसम जालसन"

(२) जलाला—बर्गकार, इस वैभवशाली राज्य में इम प्रकार का बनाया गया । तौल और अङ्कुरणपैट के सदृश ।

(३) दर्ब—जलाला का अङ्का ।

(४) चरन—जलाला का चौथाई ।

(५) पारडौ—जलाला का पाँचवाँ भाग ।

(६) अष्ट—जलाला का आठवाँ भाग ।

(७) दसा—जलाला का दसवाँ भाग ।

(८) कला—जलाला का सोलहवाँ हिस्सा ।

(९) सूकी—जलाला का बीसवाँ भाग ।

जलाला की तरह गोल रूपए की भी उपर्युक्त रंजगारी बनाई जाती है, पर उनकी सूखत शक्ति में भिन्नता होती है ।

ताम्र-मुद्रा ।

‘—दाम’—तांबे का सिक्का है, ५ टांक का, जिसका वज्जन १ तोला ८ माशो ७ रक्ती होता है । यह रूपए का चालीसवाँ भाग है । पहले इसे पैसा कहते

के अनुसार मुमलमान बादशाहों ने हिन्दुओं (the Death of Akbar, P. 55) ।

की तरह पर रूपया बनाया था । परन्तु रूपया शब्द शेरशाह के समय में ही प्रयोग हुआ । यह सम्भव भी है । फ़ारमा अहरों में यदि रूप्य शब्द लिखें तो राय का शुद्धोच्चारण न जानने वाला व्यक्ति उसे रूपया, ‘रूपियह’ आदि पढ़ेगा । अनुमान होता है, पढ़ाई लिखाई में ही राय का नाम रूपया पड़ गया ।

मोरलैण्ड लिखते हैं अकबर का “चोर्दा का मुख्य मुद्रा १७२^२ ग्रेन का रूपया था, जो वज्जन में आज कल के रूपए के बराबर था । तांबे का खास सिक्का दाम था । इनमें से प्रत्येक के खंड मुद्रा भी थे । रूपए का सबसे छोटा खंड मुद्रा उसका बीसवाँ भाग (सूकी) था, और दाम का अष्टमांश या दसड़ी ।

रूपए का तुलनात्मक मूल्य अंग्रेजी सिक्कों में २ शिलिङ्ग ३ पैस था” (India at

विटिश सरकार के प्रारम्भिक सिक्कों के चार नमूने विटिश स्थूजिनम में हैं । उनमें से एक पर एक तरफ The rupee of Bombay, 1677 By authority of Charles the Second, और दूसरी तरफ King of Great Britaine, France and Ireland लिखा हुआ है । यह तौल में १८७.८ ग्रेन है (हाब्सन जाल्सन) । चांदी के भाव के घटने बढ़ने के अनुसार, शिलिङ्ग के मुकाबले में, रूपए का तुलनात्मक मूल्य घटता बढ़ता रहता था । १८६८ हूँ में पार्लामेंट के एक प्रेक्ट के अनुसार ह्रस्की दर १ शिलिङ्ग ४ पैस नियत हुई थी । प्रचलित कलदार रूपए की तौल १८० ग्रेन है ; जिसमें १६२ ग्रेन चांदी और १८ ग्रेन अन्य ध्रुण रहती हैं ।

—कई लेखकों के मतानुसार ग्रीक भाषा के “मुख्य सिक्कों के नाम भारतीय

थे और बहलोली भी। आज कल यह दाम के नाम से प्रसिद्ध है। इसके एक और अंकित होने का स्थान, और दूसरी तरफ साल और महीना खुदा हुआ है। हिसाब करने वाले हर दाम को २५ भागों में विभाजित करते हैं, और हर भाग को जीतलः कहते हैं। यह काल्पनिक विभाजन हिसाब किताब में काम आता है।

२—अधिला—दाम का आधा।

३—पावला—दाम का चौथाई।

४—दमड़ी—दाम का आठवां भाग।

इस शासन के आरम्भ में, सोना, अनेक स्थानों पर सम्राट् के श्रेष्ठ नाम से उच्च पद प्राप्त करता था, अर्थात् बहुत जगहों पर सिक्के बनाये जाते थे; पर आज कल वे चार स्थानों के अतिरिक्त और कहीं नहीं अंकित होते हैं, यथा:—गजधानी, बंगाला, अहमदाबाद और काबुल। चांदी और तांबे के सिक्के उपर्युक्त चार जगहों

भाषाओं में समाविष्ट हो गये। द्रम्म (वर्तमान दाम) ग्रीक शब्द ἡकमी (*Hēkamī*) का विकृत रूप है और दीनार दीनारियम का रूपान्तर है” (Rawlinson's Intercourse Between India and the Western world, P 167, Ed 1916)। आप्टे के कोष में भी उपर्युक्त मत का समर्थन किया गया है। द्रम्म शब्द भास्कराचार्य के प्रसिद्ध ग्रंथ लीलावती में आया है—वराटकानां दशकद्रूय यत् साकाकिणी ताश्च पणश्चतस्तः; ते षोडश द्रम्म इहाव गम्यो द्रम्मैस्तथा पोडशभिश्च निष्कः—अर्थात् बीस कौड़ियों की एक काकिणी, ४ काकिणी का १ पण, १६ पण का १ द्रम्म और १६ द्रम्म का १ निष्क। अकबर के राजत्व काल में दाम आज कल के पैमे की तरह चलता था। पीछे से जीतल की तरह दाम भी एक काल्पनिक मुद्रा रह गया। कारनेगी (Carnegie) ने अवध के काल्पनिक सिक्कों की तालिका इस प्रकार निर्मित की है:—

२६ कौड़ी = १ दमड़ी

१ दमड़ी = ३ दाम

२० दमड़ी = १ आना

२५ दाम = १ पैसा।

अकबर के समय में सिक्कों में दाम एक विशेष महत्व की चीज़ था। “शाही रजिस्टरों के अनुसार दिल्ली के बादशाहों के सब प्रदेशों का राजस्व ६ अरब ३० करोड़ दाम या २ करोड़ ५० लाख रुपए था” (Muhammad Sharif, in Elhot, vii 138)। ‘आईने - अकबरी’ में भी वेतन, राजस्व आदि सबका उल्लेख दामों में है।

१—जीतल भारतवर्ष का बहुत पुराना तांबे का सिक्का है। पश्चिमी घाट पर यह बहुत दिनों तक चलता रहा था; परन्तु अब इसका पता नहीं है। ई० टामस के अनुसार अलाउद्दीन का जीतल तंगा का (जिसका पीछे से रुपया नाम पढ़ गया) ^१ ६४ भाग या वर्तमान समय के पैसे के बराबर था। परन्तु इसका चलन अलाउद्दीन के पहले से था, जैसा कि नीचे के उदाहरणों से प्रकट होता है। “कुतुबुद्दीन (११६३—६४) की आज्ञा से निजामुद्दीन मुहम्मद जब दिल्ली लौटा था,

में तथा निम्नलिखित इस और स्थानों में बनाये जाते हैं,—इलाहाबास (इलाहाबाद), आगरा, उज्जैन, मुरन, देहली, पटना, काश्मीर, लाहौर, मुल्तान और टांडा। पर निम्नलिखित अद्वाइस स्थानों पर केवल तांबे के सिक्कों का मुद्रण होता है,—अजमेर, अवध, अटक, अलवर, बदायूँ, बनारस, भकर, बहेग, पटन, जौनपुर, जालन्धर, हरिद्वार, हिमाचलपीरंजा, कालपी, ग्वालियर, गोरखपुर, कलानीर, लखनऊ, मंदू, नागोर, सरहिन्द, स्यालकोट, सरोज, महारनपुर, सारंगपुर, सबल, कल्नोज, रणथम्भोर। १

इस समृद्धिशाली देश में अधिकतर लेन देन मोहर-गिर्द, रुपया२ और दामों में होता है। लालची चोटे सिक्कों के माल को घिमकर तथा दृमर उपायों से खगब करके मनुष्यों को बड़ी हानि पहुचाते हैं। इस लिए ममाद् समय की गति पहुचान कर मदा कार्य कुशल व्यक्तियों के मतानुसार नए कानून बनाता रहता है, और इस हानिप्रद व्यवहार का इलाज कर देता है।

सिक्कों के आईनों में कई बार परिवर्तन होते हैं। पहले, (जलूसी सन् २७, १५८८ ई०) में, जब कि शासन का प्रबन्ध-भार राजा टोडरमल^२ के हाथा में था,

तो वह अपने साथ दो गुलाम राजधानी दिल्ली में लाया था। मलिक कुतुबुद्दीन ने उन दोनों तुकों को १००००० जीतल को खरीद लिया था” (Raverty Tabkati Nasiri, P. 603)। १२६० ई० में “दिल्ली में दुर्भिक्ष पड़ा था, उस समय अज्ञ एक जीतल का केवल सेर भर मिलता था” (Zia-ud-din Barni, in Elliot, III 146)। अकबर के समय में यह काल्पनिक-मुद्रा रद्द गया था। मध्य काल में पुर्तगीजों का सेइलिल (Ceitile या Zaitoles) नामक तांबे का एक छोटा सिक्का था। कदाचित् यह और जीतल शब्द एक हो (Fernandes in Memorias da Academia Real das Sciencias de Lisboa, 2 da Classe, 1856)। “रायासुल्लुरात” के अनुसार जीतल शब्द हिन्दी का है।

३—“बाबर ने सात टक्सालें स्थापित कीं और हुमायूँ के समय में नौ और

अकबर के समय में बहन्तर तक हाँ गई, परन्तु ओरंगज़ेब के समय में वे केवल श्रद्धमठ रह गई थीं।” (हिन्दुस्तानी)

२—मुगलों का मुद्रा निर्माण-कार्य साधारणतया उस समय के यूरोपीय सम्राटों से अत्यधिक उत्तम था; और अकबर के सिक्के धातु की शुद्धता, तोल की पूर्णता एवं कला की दृष्टि में विशेष रूप में उत्कृष्ट थे (Mughal Rule in India by H. L. O. Garret, M. A., 1930, P. 218)।

३—यह वाक्य मूल ग्रंथ में नहीं है। प्रमग को स्पष्ट करने के लिए दूसे ब्लाक्सैन के अनुवाद के अनुसार जोड़ दिया गया है।

४—राजा टोडरमल का जन्म लाहौर में एक खबरी के घर में हुआ था। अकबर के राजत्व काल के अद्वारहवें वर्ष में, संभवत वह नोकर हुआ। पहले पहल उसको गुजरात का झगड़ा नय करने का काम मापा

सम्राट् ने चार प्रकार को मोहरे प्रबलित की थीं। पहली—लाल जलाली, उस पर सम्राट् का नाम खुदा हुआ था; उसकी तौल १ तोला १३ रत्ती, खराई में पूरी, और मूल्य ४०० दाम था। दूसरी वह मोहर थी, जिसको सम्राट् ने अपने शासन के आरम्भिक काल में जारी किया था। इसका वजन ११ मार्श था। यह तीन प्रकार की थी। पूर्णतया खरी और तौल में भी पूरी होने पर उसका मूल्य ३६० दाम होता था। चलन के अनुसार यदि वह तीन चावल तक घिस जाती थी, तो उसी कोटि की मानी जाती और मूल्य में कम नहीं की जाती थी। पर जो मोहर चार चावल से छे चावल तक घट जाती थी, वह दूसरे दर्जे का नगद रख्याल किया जाता था, और उसका मूल्य ३५५ दाम होता था। अगर छे से नौ चावल तक घट जाती, तो लोग उसको तीसरे दर्जे का मुद्रा मानते थे, और उसका मूल्य ३५० दाम रह जाता था। इसमें भी अधिक धिर्सा हुई मोहर को बिना सिक्का किया हुआ सोना मानते थे।

रूपया, तीन प्रकार का चलना था। पहला, चौकोण—खालिम चांदी का, तौल ११^१ मार्श, नाम जलाला, मूल्य ४० दाम। दूसरा, गोल, पुराना अकबर शाही रूपया—तौल में पूरा या एक रनी तक कम होने पर मूल्य ३६ गया।

उसीसवें वर्ष में उसने बंगाल में मुनीम खाँ के साथ काम किया, और पीछे से तीन साल फिर गुजरात में। अत्ताइसवें वर्ष वह राज्य का दीवान बनाया गया। इस साल उसने राजस्व सम्बन्धी नई व्यवस्था जारी की। अत्तीसवें वर्ष किसी खत्री ने उसपर आक्रमण किया। इसी साल वह बीरबल की मृत्यु का बदला चुकाने के लिए, यूसुफ़ज़हयो पर चढ़ाई करने के लिए भेजा गया। अब टोडरमल बृह द्वे चुका था, इस लिए चौतीसवें साल में उसने त्यागपत्र दे दिया। अकबर ने उसको अनिष्टा से स्वीकार किया। अंतिम जीवन उसने गीरातट पर बर्तीत किया; जहाँ १० नवम्बर सन् १५८६ ई० को उसका स्वर्गवास हो गया। राजा टोडरमल ने अपनी बुद्धि प्रखरता से चार हज़ारी पद प्राप्त किया था। वह माली मामलों की समझदारी के लिए

जितना प्रभिद्वा था, वैश्विक स्वाहम के लिए भी उतना ही स्वातिनामा था। उसके ज्येष्ठ पुत्र का नाम दहारा था। वह भी वीर था। जैसे उसका पिता ४००० मैनिको का स्वार्मी था, वैसे ही उसका पुत्र भी ७०० का मम्बदार था। छठ के युद्ध में वह वीर गति को प्राप्त हुआ था।

अबुल फ़ज़्ल, टोडरमल को व्यक्ति गत रूप में पमन्द नहीं करता था, परन्तु उसने उसकी दृष्टा और योग्यता को प्रशंसा की है। वह उसपर हिन्दुओं का कट्टर पक्षपाती होने का लांछन लगाता था। यहाँ तक कि उसने इसकी शिकायत खुल्लम खुल्ला अकबर में की थी। पर सम्राट् ने टोडरमल की राजभक्ति और सेवाओं का स्मरण करके उत्तर दिया कि “मैं एक ब्रह्म सेवक को पृथक् नहीं कर सकता हूँ।”

टोडरमल हिन्दू धर्म का कट्टर अनुयायी

दाम ; और दो रक्ती तक कम होने पर मूल्य २८ दाम। इसमें अधिक विमा हुआ रुपया चांदी के भाव में लिया जाता था।

दूसरी बार, १८ मंहर मन २६ इलाही में, जब अजदुहोला अमीर कृतहउज्ज्ञा शीराजी^१ राज्य का अमीन नियुक्त हुआ, तो शाही कग्मान (राजाज्ञा पत्र) जागी हुआ, कि मोहर में तीन चावल और रुपये में छ चावल तक की घिसावट को, कम न माना जाय। इसमें अधिक कम होने पर, न्यूनता के अनुसार मूल्य काटा जाय। यह नहीं कि जो चावल तक की कमी का यक्सांही रख्याल किया जाय। इस कारण में एक रक्ती कम वाली मोहर का मूल्य ३५५ दाम और कुछ भिन्न नियन हुआ। और एक रक्ती अंकित माने की दर चार दाम और कुछ भिन्न मानी गई। पहले (टोडरमल के) था। एक बार बादशाह के साथ उसको उसे फारम में दक्षिण प्रदेश में बुलाया पंजाब जाना पड़ा। प्रस्थान की शीघ्रता था। मन ६११ हिं० में जब आदिल शाह में उसकी उपास्य श्री मर्तियाँ खो गईं। का स्वर्गताप हो गया, तो सम्राट् अकबर वह बिना पूजन किये काई नहीं करता था। इस लिए अब की बार उसको कई दिन बिना अन्न जल के रहना पड़ा। जब उसने उसको अमीनुल्मुलक का उपभी इस घटना की सूचना सम्राट् का मिर्ला, प्रदान का। यह राजा टोडरमल का महायता के लिए नियत किया गया। उसने उसके अवधारणा की सूचना में उसको मान्तवना दी। उसके और बीरबल के प्रामिक उक्त कार्य बड़ी तत्परता में किया। अकबर विचारों में कुछ अन्तर था। बीरबल ने प्रयत्न होकर उसकी उपाधि बदल दी स्वर्ग-यात्रा के पहले ही दीन इलाही' और अजदुहोला (राज्य का भुजा) का मत का सदस्य हो चुका था, परन्तु टोडरमल ने अन्त तक उसको स्वीकार नहीं किया था। उसके विशेष विवरण के लिये द्वितीय ग्रन्थ में विवरण न० ३६ के जीवनचरित को देखिये।]

१—अमीर कृतहउज्ज्ञा, शीराज (फारम) का रहने वाला था। तत्वज्ञान और पदार्थ विज्ञान इसका चढ़ा बढ़ा था। उसके बीच कला में वह विशेष दृज था। उसके गुणों पर मुग्ध होकर अबुल कृज़ल कहा करता था, “यदि प्राचीन ग्रन्थ नष्ट हो जाय, तो अमीर उनका पुनर्निर्माण कर सकता है।” बीजापुर के आदिलशाह ने

उसे फारम में दक्षिण प्रदेश में बुलाया था। मन ६११ हिं० में जब आदिल शाह का स्वर्गताप हो गया, तो सम्राट् अकबर ने उसे बुला लिया, और मद्र (प्रधान) का पद प्रदान किया। तीन साल बाद उसने उसको अमीनुल्मुलक का उपभी प्रदान का। यह राजा टोडरमल का महायता के लिए नियत किया गया। उसने उक्त कार्य बड़ी तत्परता में किया। अकबर ने प्रयत्न होकर उसकी उपाधि बदल दी और अजदुहोला (राज्य का भुजा) का पदवी से उसे विभूषित किया। इसके बाद यह खानदेश गया। मन ६१७ में जब वह नापम आ रहा था, अकबर उस समय काश्मीर में था, अमीर कृतहउज्ज्ञा को उवर आ गया। यह सोचकर कि “मैं हिकमत का जाना है, मैं वाते जानता हूँ, जो कुछ भी उपचार करूँगा, दंक होंगा”, हकीम अली के विरोध करने पर भी हरीमा (एक प्रकारका हरीरा —जो गेहूँ, मांस, धी, नमक और मसाला आदि से बनता है) खा लिया, जिससे वह मर गया।

अबुल कृज़ल, फैजी और बीरबल के बाद बादशाह सबसे अधिक प्रेम अमीर

कानून के अनुसार, मोहर में एक रत्ती कम होने पर पांच दाम घटाते थे, और तीन चावल से अधिक की कमी में भी यदि वह कमी आधा चावल होती, तो पाँचही दाम का हिसाब लगाते थे । १२ रत्ती की कमी के लिए, लेन देन में १० दाम कम किये जाते थे । यदि इतनी कमी न भी होती, तो भी दस दाम का ही हिसाब लगाते थे । परन्तु नए कानून (अजदुहौला के कानून) के अनुसार वह ६ दाम और कुछ भिन्न घटाई गई और उसका मूल्य ३५३ दाम और कुछ भिन्न रह गया । अजदुहौला ने उस कानून को भी रद किया, जिसके द्वारा गोल रूपण का मूल्य, उसके पूर्णतया खंड होने और तौल में पूरे होने पर भी, चौकार रूपण से एक दाम कम माना जाता था । एक रत्ती तक कम होने पर भी, उस गोल रूपण का मूल्य ४० दाम नियत किया । पहले यदि रूपण दो रत्ती कम होता, तो उसका मूल्य दो दाम कम समझा जाता था । पर अब उतनी ही कमी के लिए, उसके मूल्य में एक दाम और कुछ भिन्न कम किया जाता है ।

तोमर, जब अजदुहौला स्वानंदश गया, तो राजा टोडगमल ने मोहर का मूल्य, जो जलाला रूपयों से लगाया जाता था, गोल रूपयों में नियत कर दिया; और अपने स्वाभाविक पक्षपात तथा हठधर्मी से मोहर और रूपण की कमी को पहली गीति के अनुसार मुकर्गर किया ।

चौथे, जब राज्य की रक्षा का भार कुलाज खाँ^{१३} पर आपड़ा, तो उसने मोहरों के मूल्य कृतने का नियम वही भविकार किया, जो कि राजा टोडगमल ने फ्रतहउल्ला से करता था । कई आविष्कार^{१४} के मंमवदारों की सूची में नहीं है । भी उसने किये थे, परन्तु अबुल फ़ज़्ल ने उनको अकबर के नाम से विरायात किया है । अमीर की अबुल फ़ज़्ल से अच्छी बनती थी । उसके पुत्र को अमीर ने शिक्षा दी थी । “मीरातुल आलम” के लेखक के मतानुसार वह एक संसारी जीव था । बहुधा जब वह बादशाह के साथ शिकार में जाता था, तो कंधे पर बन्दूक और फेंट में बारूद रखकर शक्ति का प्रदर्शन करता हुआ चलता था ।

“मश्रूसिरुज्ज उमरा” के लेखक का कथन है कि कुछ लोगों के मतानुसार वह तीन हज़ारी मंमवदारों में था । उसका नाम “तबक्काते-अकबरी” अथवा “आईने-अकबरी”

१—अजदुहौला ने १ रत्ती मुद्रित सोने का मूल्य चार दाम और कुछ भिन्न नियत किया था । इसलिए पूरी तौल अर्थात् ११ माशे भर की मोहर का मूल्य (११ माशे × ८ रत्ती) × ४ + कुछ भिन्न = ३५२ + कुछ भिन्न या लगभग ३५३ दाम या उससे कुछ अधिक) अबुल फ़ज़्ल के मतानुसार ३५३ दाम और कुछ भिन्न था । पहले इसी का मूल्य ३६० दाम था ।

२—कुलाज अकबरी शासन के १७ वें वर्ष में, सबसे पहले सूरत के दुर्ग का शासक बनाकर भेजा गया था; जिसको अकबर ने ४७ दिन के घेरे के बाद जीत लिया

निश्चित किया था। परन्तु राजा मोहर की जिननी कमी के लिए, पांच दाम कम करता था, कुलीज खां ने उसके लिए १० दाम घटाकर क्रय-विक्रय का बाजार परिचालित किया। जिस मोहर में गजा दस दाम कम करता था, उसने उसके लिए दुगना (२० दाम) घटाया जाना नियत किया। जो मोहर $\frac{1}{2}$ रत्ती से अधिक कम होती थी, उसकी गणना उसने बिना सिक्का किये हुये माने में की। जो रूपया एक रत्ती में अधिक कम होता उसको वह बिना अंकित की हुई चांदी रख्याल करता था।

सम्राट् राजाज्ञा-रक्तको पर विश्वास करता था, और कार्यों की अधिकता के कारण वह पहले इस ओर बहुत कम ध्यान देता था। जब इस कारखाने के कुप्रबन्ध था।

कुलीज खां तेहमवें वर्ष गुजरात भेजा गया; और शाह मंसूर की मृत्यु के बाद वह पिछले दो साल के लिए दीवान नियत हुआ। अट्टाहमवें वर्ष गुजरात की विजय में फिर उसने भाग लिया। चौंतीसवें वर्ष उसे संभल की जागीर मिली। टोडरमल की मृत्यु के बाद, वह फिर दीवान बनाया गया। इसी समय उसने सिक्कों के मूल्य में हेरफेर किया। सन् १००२ हिजरी में वह काबुल का गवर्नर नियुक्त हुआ। परन्तु वहां वह असफल रहा। सन् १००५ हिजरी में, जब कि बादशाह ग़ान्धारा दानियाल का शिक्षक बना। सन् १००७ हिजरी में, जब कि बादशाह ग़ान्धारा में था, वह आगरे की गवर्नरी पर तैनात था। दो वर्ष बाद वह पंजाब और काबुल का सूबेदार नियुक्त किया गया। जहाँगीर के गही पर बैठने के बाद वह गुजरात भेजा गया, परन्तु दूसरे ही वर्ष

पंजाब वापस गया। जहां उसको रौशनाइयों में युद्ध करना पड़ा। सन् १०३५ हिजरी में उसकी मृत्यु हो गई। अपनी योग्यता द्वारा उसने चार हजारी की पदवी प्राप्त की थी। वह पक्षा सुन्नी था। वह कवि भी था। उसका कविता मञ्चन्धी नाम 'उलफती' था।

१—नुमार ५ बर्तमान समय के मूल्य सिक्कों और अकबरी रूपां में कितना अन्तर है, यह इस तालिका में जाना जाता है। इस से सब सिक्कों का तुलनात्मक मूल्य शिलिङ्ग और पैसों में है। अकबरी रूपया आज कल के हिमाच में लगभग २ शिलिङ्ग ३ पैस का था, और भारतवर्ष का प्रचलित कल्दार रूपया इस तालिका के अनुमार दृग्लैण्ड के १ शिलिङ्ग ६ पैस के बराबर है। विनिमय तथा योने चांदी के घटने बढ़ने के अनुमार इनके मूल्य में भी कमी बेशी होती रहती है।

देश	मुख्य सिक्का	तुलनात्मक मूल्य	
		शिं	पैस
अर्जेनटिना	पेसो (काग़ज) = १०० मैन्ताचो	१	८
	, (स्वर्ण) = „ „	४	०
आस्ट्रिया	शिलिङ्ग = १०० ग्रोशेन	०	७
बेलजियम	फ्रैंक = १०० सेण्टाहमस	०	१२

की खबर उस तक पहुँची, तो उसने एक उत्तम व्यवस्था निर्धारित की, जिसमें सुदूरवर्ती और निकटवर्ती आनन्दित हुये और संसार हानि उठाने से बच गया।

देश	मुख्य सिक्का	तुलनात्मक मूल्य	
		शि०	पैर
बेलजियम	बेल्गा = ५ फ्रैंक	०	७
ब्रेज़िल	क्रृज़ीरो = ४ मिलरेंड	२	०
	मिलरेंड (काग़ज़) = १००० रेंड	०	६
ब्रिटिश हण्डूराम (अमेरिका)	डालर (स्वर्ण) = १०० मेण्टरम्	४	१
बुलगेरिया	लेव = १०० स्टॉटिकी	०	० ^१ २
कनाडा	डालर (स्वर्ण) = १०० मेण्टरम्	४	१
लाद्दा	रुपया = १६ आना	१	६
चिली (दक्षिणी अमेरिका)	पेसां (स्वर्ण) = १०० सेन्ताओं	०	६
चीन	टाएल (Tael) (डालर) = १०० नाम्र मुद्रा	२	८
क्यूबा (मैक्रिस्कों की खाड़ीमें)	पेसां (स्वर्ण) = १ डालर (अमेरिका)	४	१
चेको-स्लोवाकिया	क्रोन	०	१ ^१ २
डेनमार्क	क्रान = १०० ऊर	१	१ ^१ ४
मिस्र	मिस्री पोगड = १०० पियास्टरम्	२०	६ ^१ ४
फिनलैण्ड	मर्का = १०० पेनी	०	१ ^१ ५
फ्रान्स	फ्रैंक = १०० मेन्टाहमम्	०	२
जर्मनी	राहशमार्क = १०० फेनीक (Pfennig)	०	११ ^१ ६
ग्रीष्म	डृकमा = १०० लोट्रा	०	० ^१ २
हालैण्ड	फ्लोरिन = १०० मेण्टरम्	१	८
हंगेरी	पेंगो = १०० फ़िलर	०	५ ^१ २
हिन्दुस्तान	रुपया = १६ आना	१	६
इटली	लीरा = १०० मेन्टाहमम्	०	२ ^१ २
जापान	येन = १०० सेन	२	० ^१ २
मारिशस	रुपया = १६ आना	१	६
मैक्रिस्को	डालर (स्वर्ण) = १०० सेन्ताओं	२	० ^१ २
	पेसां (स्वर्ण) = २० मेण्टरम् (अमेरिका)	२	० ^१ २
न्यूफ्राउण्डलैण्ड	डालर (स्वर्ण) = १०० मेण्टरम्	४	१
नार्वे	क्रोन = १०० ऊर	१ ^१ २	

